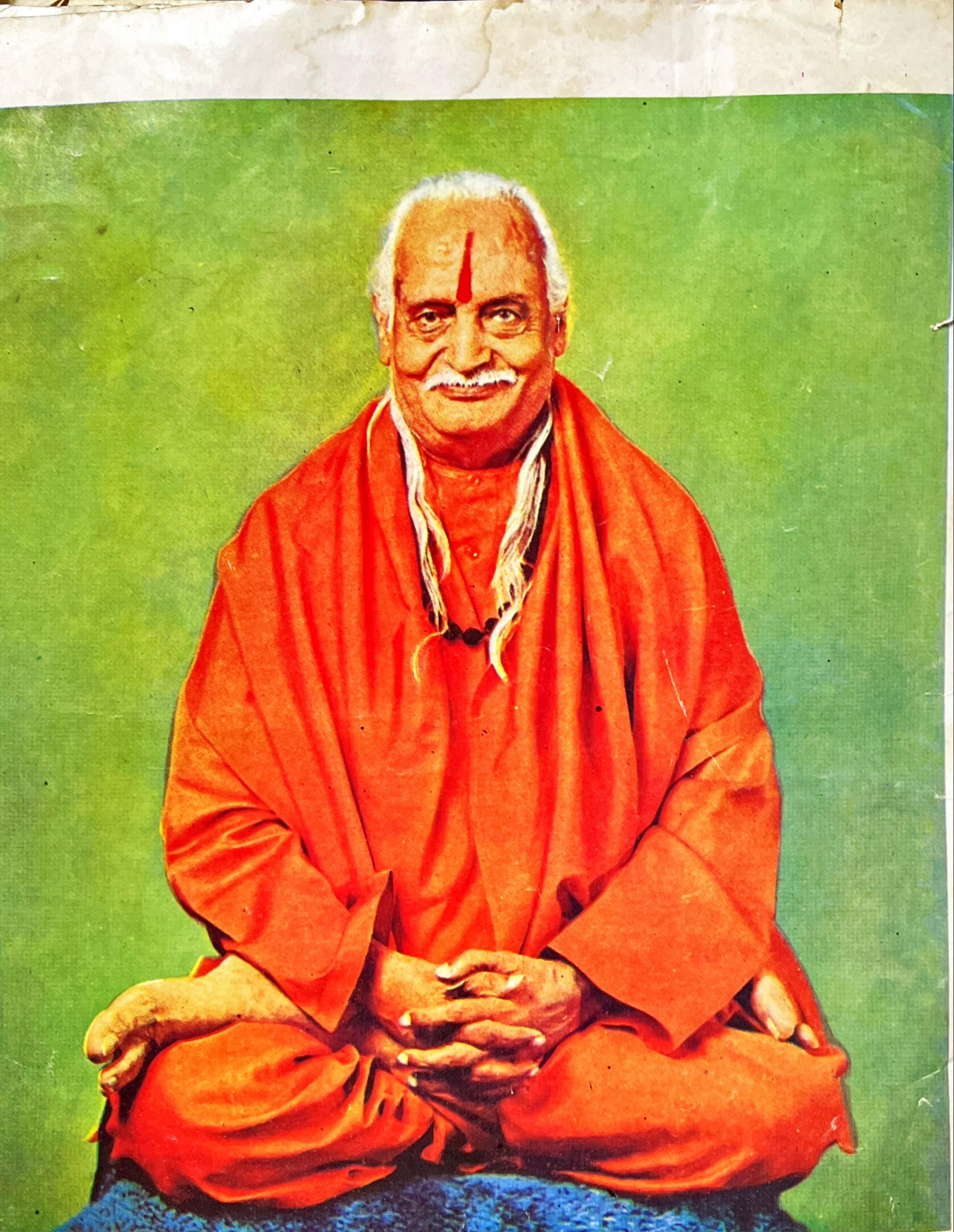
गुरु-प्रसाद

मासिक पत्र, गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट

फरवरी 2008
मूल्य : 10 रु.







वर्ष ५१ गुरु प्रसाद - फरवरी २००८ अंक ०२

उत्तरायण क्या?

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः।।

'अग्निः' - पहली बात यह है कि भगवान के नाम का जप करो। अग्नि माने जप। कैसे? वाक् की अधिष्ठात्री देवता अग्नि है, उससे ॐ ॐ ॐ का उच्चारण करो- 'ओमिति एकाक्षरम्' उसके बाद आता है 'ज्योतिः'।

'ज्योतिः' माने निद्राधिष्ठात्री देवता। भगवान् के रूप का दर्शन करो। उसके बाद रूप छोड़कर 'अहः' माने प्रकाशात्मा में स्थित हो जाओ। उसके बाद 'शुक्लः' माने सम्पूर्ण वासनाओं से रहित हो जाओ। यह क्या हुआ? उत्तरायण हो गया। उत्तरायण माने बिल्कुल ऊपर चले गये आप। इसी का नाम ऊपर जाना है। 'षण्मासा उत्तरायणम्'- आपका आधा जीवन खराब हो गया, सो तो गया। अब आधा तो ठीक रखो।

अब 'तत्र प्रयाता गच्छन्ति'- अर्थात् जप करते हुए, भगवान् का दर्शन करते हुए, प्रकाश में भगवान् के रूप को लीन करते हुए जो शुद्धान्तःकरण हो जाते हैं, वे उत्तरायण गति को प्राप्त हो जाते हैं, उनका परम कल्याण हो जाता है। वहां चले आओगे तो देखोगे कि तुम ब्रह्मविद् हो गये, तुम को ब्रह्मज्ञान हो जायेगा। तुम शुद्धान्तःकरण होने पर ब्रह्मविद् और ब्रह्म से एक हो जाओगे जिससे तुम एक नहीं हो, वह ब्रह्म नहीं है और वह ब्रह्मज्ञान भी नहीं है। ऐक्य के बिना ब्रह्म ब्रह्म होता ही नहीं है।

- स्वामी हरिहर जी महाराज

संस्थापक :
श्री १०८ स्वामी हरिहर जी महाराज
संरक्षक :
स्वामी ब्रह्मानन्द जी
सर्वोच्च आध्यात्मिक प्रमुख
गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट,
दिल्ली-११००१०
दूरभाष : २५६९४३८०
फैक्स : २५६९३३१६
E-mail Address :
guruji64@hotmail.com
geeta.ashrams@gmail.com

●

एक प्रति : १०.०० रुपये
वार्षिक सदस्यता : १०० रुपये
आजीवन सदस्यता : १००० रुपये

●

एक ही दृष्टि में

सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक आचार्य गौरीदत्त शर्मा द्वारा परम पूज्य स्वामी हरिहर जी महाराज संस्थापक अध्यक्ष गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-११००१० के निमित्त गीता आश्रम प्रिन्टिंग प्रेस, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-११००१० से मुद्रित एवं प्रकाशित।
Posted at NIE PO Naraina, New Delhi-110028 on 2nd/3rd of each month.

ब्रह्मलीन स्वामी श्री १०८ हरिहर जी महाराज का

दिव्य प्रसाद

श्रीमद्भगवद्गीता के चतुर्दश अध्याय के षोड्श श्लोक की व्याख्या तथा अर्थ-निरूपण

श्लोक

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम्।।

(श्रीमद्भगवद्गीता 14/16)

कर्मणः सु-कृ-तस्य आहुः सात्त्विकं निर्-मलम् फलम्।
रजसः तु फलम् दुःखम् अ-ज्ञानम् तमसः फलम्।।

पदच्छेद-

सुकृतस्य = सात्विकस्य, कर्मणः = कार्यस्य, सात्विकम् = सत्त्वगुण प्रधानम्, निर्मलम् = दुःखाज्ञानमलशून्यम् (भक्ति ज्ञान वैराग्य युक्तम्) फलम् = परिणामम्, आहुः = कथयन्ति, रजसः = राजसस्य कर्मणः, फलम् = परिणामम्, तु = किन्तु, दुःखम् = क्लेशम्, तमसः = तामसस्य, कर्मणोऽध र्मस्य, फलम् = परिणामम्, आज्ञनम् = मूढत्वम् (आहुः)।

अन्वयार्थ-

सुकृतस्य = श्रेष्ठ, कर्मणः = कर्म का तो, सात्विकम् = सात्विक अर्थात् भक्ति, सुख, ज्ञान, वैराग्यादि, निर्मलम् = पवित्र, फलम् = फल (परिणाम), आहु = कहा गया है, तु = किन्तु, रजसः = राजस कर्म का, फलम् = फल, दुःखम् = दुःख,, (एवम्) तमसः = तामस कर्म का, फलम् = फल, अज्ञानम् = अज्ञान, (कहा गया है)।

दोहा-

श्रेष्ठ कर्म को फल सुखद, निर्मल ज्ञान कहाय।

राजस को फल है दुखद तामस ज्ञान नशाय।।

सामान्य अर्थ-

कार्य देखकर यह ज्ञात होता है कि इस कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य है। अतः यह कहा गया कि उत्तम, मध्यम, नीच कार्य, सतोयुग, रजोगुण व तमोगुण के कारण होते हैं। अब कारण देखकर, जानकर कार्य का परिचय होता है कि कारण के अनुसार कार्य होते हैं।

भगवान ने इस श्लोक में तीन बातें कही हैं कि कर्म का फल गुण होता है। जैसे बीज से वृक्ष और वृक्ष से बीज होता है। वैसे ही अच्छे कर्म का फल जोकि पुण्य कर्म है उससे उच्च कोटि का सात्विक निर्मल फल कहा गया है। जिससे सुख, भक्ति, ज्ञान, वैराग्यादि प्राप्त होते हैं। वहीं राजस कर्म के कारण दुःख, अशान्ति, उद्वेग की प्राप्ति होती है।

और तामस कर्म करने से अज्ञान की प्राप्ति कही गई है। जैसे तीनों गुणों के कारण तीन प्रकार के कार्य होते हैं वैसे ही तीन प्रकार के कार्यों से क्रमश: तीनों गुणों रूप फलों की प्राप्ति होती है। जैसा बीज बोओगे वैसा वृक्ष होगा और फिर जैसा वृक्ष होगा उसका फल वैसा ही बीज आगे तैयार होगा।

भगवान ने तीसरे अध्याय के 33वें मंत्र में कहा है कि सभी प्राणी प्रकृति को प्राप्त होते हैं। अर्थात् अपने स्वभाव से परवश हुए कर्म करते हैं। ज्ञानवान भी अपनी प्रकृति के अनुसार चेष्टा करता है। फिर इसमें किसी का हठ क्या करेगा। कार्य तो प्रकृति के बस हो रहे हैं।

अर्थात् जैसी प्रकृति है वैसे ही कार्य सम्पादित होते जाते हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि फिर हमारा उद्धार कभी हो ही नहीं पायेगा। आवागमन के चौरासी लाख योनियों के चक्कर में चक्कर लगाते रहेंगे। उसका समाधान गोस्वामी तुलसीदास जी करते हैं कि भगवान करूणा वरुणालय कभी करुणा करके मनुष्य देह दे देते हैं। अत: उसे पाकर अपना भविष्य सुधार लेना चाहिए।

कबहुँक करि करुना नर देही।
देत ईस बिनु हेतु सनेही।।
नरतन भव बारिधि कह बेरो।
सनमुख मरूत अनुग्रह मेरो।।
करणधार सतगुरु दृढ़ नावा।
दुरलभ साज सुलभ करि पावा।।

सद्‌गुरु की भी प्राप्ति भगवत्कृपा से होती है। हाँ भाव-श्रद्धा अपश्य चाहिए। यह सिद्धांत हुआ गुणों के अनुसार कार्य होकर सुगति, गति और दुर्गति की प्राप्ति। अब है दूसरा सिद्धांत कि जैसा कर्म करोगे, वैसे गुण उत्पन्न होंगे।

कर्म प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा।
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता।
निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।।
जोग वियोग भोग भल मंदा।
हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा।।
जनम मरन जहंलगि जगजालू।
संपत्ति विपति करम अरु कालू।।
धरनि धाम धनु पुर परिवारू।
सरगुनरकु जंह लगि व्यवहारू।
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं।
मोह मूल परमारथ नाहीं।।
सपने होइ भिखारि नृपु रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियं जोइ।।

इस मंत्र के अनुसार व्यक्ति कर्म करके सात्विक सुख, राजस फल कर्म का सकाम चक्कर और तामस फल निद्रा प्रमाद आलस्य प्राप्त कर लेता है।

यह सुख भी तीन प्रकार का है। भगवान ने यह वर्णन 18वें अध्याय में किया है कि तीनों ही प्रकार के सुख, सतोगुणी, रजोगुणी व तमोगुणी कैसे होते हैं।

जिस सुख में साधक मनुष्य,, भजन, ध्यान सेवादि अभ्यास से रमण करके दु:खों के अन्त को प्राप्त हो जाता है, ऐसा सुख आरम्भकाल में यद्यपि विष तुल्य प्रतीत होता है, किन्तु परिणाम में अमृत-तुल्य फल प्राप्त होता है जो परमात्मरति बुद्धि के प्रसाद से उत्पन्न होने वाला, सात्विक सुख कहा गया है।

भगवान आगे कहते हैं-

जो सुख विषय और इन्द्रियों के संयोग से होता है, वह पहले भोगकाल में अमृततुल्य भासता है किन्तु परिणाम में बल, वीर्य, बुद्धि, धन, उत्साह, लौकिक और भगवद्-भक्ति, शांति पारलौकिक सुख के नाश के कारण, विष तुल्य कहा गया है।

अर्थात् जो सुख भोगकाल में तथा परिणाम में भी आत्मा को मोहित करने वाला है, वह निद्रा, आलस्य, प्रमाद से उत्पन्न सुख तामस कहा गया है। जैसे नशेड़ी नशा पीकर पड़ा रहता है। गंदगी में

वैसे ही नशे के बाद शरीर तोड़ फोड़कर छटपटाता है और अंत में शूकर कूकर योनि की प्राप्ति होती है। जब शरीर में है तो भी शूकर, कूकर की भांति गंदगी में रहता है अतः मरकर उन्हीं योनियों में जाता है। अतः भगवान चाहते हैं कि प्रारब्ध और कर्म दोनों साथ-साथ चल रहे हैं। प्रारब्ध भी कार्य करता है किन्तु क्रियमाण कर्म के अनुसार ही संचित कर्म और प्रारब्ध भी बनते हैं।

आधिभौतिक अर्थ-

भगवान ने 15वें अध्याय के दूसरे श्लोक में कहा- **"कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।"** अर्थात् अहंता, ममता और वासना रूप मूलों को केवल मनुष्य योनि में कर्मों के अनुसार बांधने वाली कहने का कारण, यह है कि अन्य सभी योनियां तो भोग योनियां ही हैं। जिनमें पूर्वकृत कर्मों के फल को भोगने का ही एकमात्र अधिकार है, यहां तक कि देव योनि भी इसी में सम्मिलित है। किन्तु मनुष्य योनि में नवीन कर्म करने का अधिकार है। ताकि क्रियमाण कर्म करना, उसका संचित होना और फिर भविष्य का प्रारब्ध बनना होकर मुक्ति की प्राप्ति हो जाय। मुक्ति केवल मनुष्य के लिये है अन्य किसी के लिये नहीं।

सारे उपदेश मनुष्य योनि के लिये ही हैं। अतः इस भौतिक जगत में आकर कर्म करना ही है। बिना कर्म किये हम एक पल नहीं रह सकते हैं।

भगवान ने तीसरे अध्याय के चौथे और पांचवें मंत्र में कहा कि मनुष्य न तो कर्मों का आरम्भ किये बिना निकर्मता को प्राप्त होता है। अर्थात् जिस अवस्था को प्राप्त हुये पुरुष के कर्म अकर्म हो जाने से फल उत्पन्न नहीं कर सकते। यह कर्मयोग है, इसे योगनिष्ठा कहा गया है और न कर्मों के त्याग मात्र से सांख्यनिष्ठा यानी सिद्धि को ही प्राप्त होता है। अतः कर्म प्रधान है। कर्म करके ही फलत्याग और कर्तापन का त्याग होता है।

भगवान कहते हैं कि निःसंदेह कोई भी मनुष्य किसी काल में, क्षण मात्र भी बिना कर्म किए नहीं रहता। क्योंकि सारा मनुष्य-समुदाय प्रकृतिजनित गुणों द्वारा परवश हुआ कर्म करने के लिये बाध्य किया जाता है।

जब हम बिना कर्म किये नहीं रह सकते तो जैसे एक वाहन है, वह बिना हमारे चलाये चल पड़ा और चलता जायेगा। तो इतना तो हम कर सकते हैं कि उसे सही दिशा दें। घोड़ा दौड़ रहा है। लगाम हमारे हाथ में है। वह अनियंत्रित है। रोकने से रुकने वाला नहीं है, किन्तु लगाम हमारे हाथ में होने से उसे सही दिशा दें। ऐसे ही हम बिना कर्म किये नहीं रह सकते तो कर्म सत्कार्य हों, ऐसा प्रयास तो कर ही सकते हैं। घोड़े को सही दिशा दें। साथ ही भगवान का भी स्मरण चलता रहे। नदी के वेग को रोका जाना बहुत ही कठिन है, किन्तु उसे दिशा दी जा सकती है। नदी पर बांध बनाकर भी हम उस जल को नहर के द्वारा दिशा प्रदान करते हैं। पूर्णतया रोकने का प्रयास करने पर बांध टूट जाते हैं और विनाश-लीला होने लगती है। अतः इस भौतिक जीवन में हमें कार्य करना है। कर्मफल अपने हाथ में नहीं हैं, अतः उस पर दावा नहीं करना है। और निद्रा, आलस्य और प्रमाद के वशीभूत होकर अकर्मण्यता तो नहीं प्राप्त होता है।

भगवान ने छठे अध्याय के 40वें, 41वें और 42वें श्लोक में सतोगुणी कर्म करने वालों के विषय में कहा है कि कोई सत्कर्म व्यर्थ नहीं जाता। जैसे माचिस की एक तीली सारे पानी को तो नहीं सुखा सकती किन्तु एक बूंद जल को जला तो सकती ही है। वैसे ही सत्कर्म करने वाले पुरुष का न तो इस लोक में विनाश होता है और न परलोक में ही। क्योंकि भगवत्प्राप्ति हेतु कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को कदापि प्राप्त नहीं होता है।

वह योगभ्रष्ट पुरुष पुण्यवानों के उत्तम स्वर्गादि लोकों को प्राप्त करके कुछ काल वहां वास करके शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरुषों के यहां जन्म लेता

है।

यदि वह विरक्त भाव से जीवन-यापन करता रहा है, तो वह वैराग्यवान स्वर्ग आदि में न जाकर सीधा ज्ञानवान् योगियों के कुल में जन्म लेता है। ऐसा जन्म निःसंदेह दुर्लभ है।

भगवान ने रजोगुणी मनुष्यों के लिये 9वें अध्याय के 20वें 21 वें मंत्र में कहा है कि सकाम कर्म करने वाले, सोमरस का पान करने वाले निष्पाप पुरुष मुझको यज्ञों द्वारा पूजकर स्वर्ग-प्राप्ति की कामना कर, पुण्य कर्मों के फल रूप स्वर्ग को प्राप्त करके वहां कुछ काल वास करके, भोग भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक को प्राप्त होते हैं। ऐसे राजसी सकाम कर्मी बार-बार आवागमन के चक्र में भटकते रहते हैं।

भगवान तमोगुणी मनुष्य के बारे में 16वें अध्याय के 19वें 20 वें श्लोक में कहते हैं कि उन द्वेषी, पापाचारी, क्रूरकर्मी, नराधमों को संसार में बारम्बार आसुरी योनियों में डालता हूं और वे मूढ़ मुझको न प्राप्त होकर, जन्म-जन्म आसुरी योनि को प्राप्त होते हैं फिर उससे भी अतिनीच गति को प्राप्त होकर घोर नरक में पड़ते हैं।

भगवान इस भौतिक युग के प्राणियों को इस काम, क्रोध, लोभ-मार्ग को त्यागने का आदेश देते हैं-

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्।।
(गीता 16/21)

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिषि महं छोभ।।
लोभ के इच्छादंभ बल काम के केवल नारि।
क्रोध के परुष बचन बल मुनिजन कहहिं विचारि।।

आधिदैविक अर्थ-

अधिदेव तो हिरण्यमय पुरुष ही हैं। जो कि निर्गुण निराकार ब्रह्म का सगुण विग्रह हैं। सगुण, साकार और सगुण निराकार में स्वरूप अन्तर है। बिना प्राकट्य लीला (जन्म लीला- अवतार लीला) किये जो स्वरूप रचा है वह है सगुण निराकार अधिदेव। निर्गुण निराकार कोई कार्य कर ही नहीं सकता। अतः सगुण निराकार ही कार्य करता है। उस महत् तत्व से ही अहं की उत्पत्ति हुयी है। अतः कार्य सम्पादित होते हैं।

राम कीन्ह चाहैं सोई होई।
करै अन्यथा उस नहि कोई।।
होइहै सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा।।

अतः हमें अपने आपको भगवान के हाथों में सौंप देना चाहिए। हम भगवान का सहारा लेकर अपने अहंकार के कारण स्वयं बोझा ढोते रहते हैं। जैसे एक घुड़सवार घोड़े पर बैठकर घास का गट्ठर अपने शिर पर रखकर सोचता है कि वह घोड़े पर भार कम डाल रहा है ऐसे भगवान का सहारा लेकर भी हम खुद को कर्ता मान बैठते हैं और कर्म फल के दावेदार बनकर कर्मभोगी बन बैठते हैं।

भगवान ने चौथे अध्याय में ही चार वर्णों की चर्चा की है कि ब्राह्मण, क्षत्रिण, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों का समूह उनके गुण-कर्मों के विभागपूर्व उनके द्वारा रचा गया है। उस सृष्टि रचनादि कर्म का कर्ता होने पर भी अविनाशी परमेश्वर वास्तव में अकर्ता ही जान।

अतः भगवत्कृपा है ही, अपने कर्म भी आगे की गति-निर्धारण में सहायक हैं। भगवान कहते हैं कि कर्मफल में स्पृहा नहीं होने से भगवान को कर्म लिप्त नहीं करते, जो इस तत्व को जान लेता है, वह भी कर्मों से नहीं बंधता।

तीनों गुण त्रिगुणमयी प्रकृति से उत्पन्न हैं। हमारे शरीर की उत्पत्ति प्रकृति से हुयी है, अतः

हमारे शरीर एवं स्वभाव में तीनों गुणों का समावेश है। सत्य यह है कि प्रकृति स्वतंत्र नहीं है। प्रकृति भगवान की अध्यक्षता में ही सारा कार्य करती है। हम प्रकृति के अधीन होकर कार्य करते हैं। यदि हम सूत्रधार भगवान काा आश्रय ले लें तो प्रकृति के वशीभूत न होकर भूतेश्वर के वशीभूत होंगे और कार्य गुणातीत भाव से होंगे और मुक्ति सुलभ होगी। गीता-वेदान्त का सांख्य शास्त्र एकमेव अद्वितीय ब्रह्म की शरण है।

आध्यात्मिक अर्थ-

आत्मा परमात्मा का अंश है। भगवान अंशी हैं। हम उनके अंश हैं। अंश अंशी में ही समाता है। भगवान से उत्पन्न प्रकृति परम पुरुष की लीला सहचरी मात्र है। इस प्रकृति से हमारा शरीर अवश्य उत्पन्न हुआ है। किन्तु हम इससे उत्पन्न हुये ही नहीं। हम तो शाश्वत, सनातन, नित्य, शुद्ध, निरंजन हैं। अतः आत्मा से कोई कार्य होता ही नहीं। आत्मा किसी बंधन में कभी आ ही नहीं सकती। बंधन आकार को लगता है। जिसका कोई आकार नहीं उसे कौन बांध सकता है। वह तो स्पृहा रहित ही है। अविद्या के कारण बंधन की प्रतीति होती है। अतः शरीर अहंकार के कारण सात्त्विक राजस, तामस कर्म करता है और परिणाम स्वरूप सात्त्विक, राजस, तामस फल शरीर को प्राप्त होते हैं। सूक्ष्म शरीर तथा कारण शरीर। अब बंधन और मुक्ति का ज्ञान केवल मनुष्य को ही है। अतः बंधन-मुक्ति स्थूल शरीर के त्याग के उपरान्त मनुष्य के ही सूक्ष्म शरीर व कारण शरीर को होती है। प्रेत योनि केवल मनुष्य के लिये ही है, पशु के लिये नहीं। अतः शरीर जैसा सकाम कार्य करेगा, उसे आगे भी वैसा ही शरीर प्राप्त होगा। दुःख सुख की अनुभूति भी शरीर के लिये है। जिन महायोगी महात्यागी संतों ने हंसते-हंसते शरीर त्यागा वे ब्रह्ममय है। जैसे गुरु अर्जुन देव व गुरु तेग बहादुर।

तेग बहादुर के चलत भयो जगत में शोक।
है है है सब जग भयो, जै जै जै सुरलोक।।

सम्पुट वल्ली पाठ

देश-विदेश स्थित समस्त गीता आश्रमों में दैनिक सम्पुट वल्ली पाठान्तर्गत 31 जनवरी 2008 को श्रीमद्भगवद्गीता के चौदहवें अध्याय का ग्यारहवां मंत्र (14-11) एवं 1 फरवरी 2008 को चौदहवें अध्याय का बारहवां मंत्र (14-12) सम्पुट वल्ली मन्त्र होगा।

सर्वद्वारेषु देहेस्मिन्प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्वमित्युत।।

(श्रीमद्भगवद्गीता-14/11)

लोभ : प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ।।

(श्रीमद्भगवद्गीता-14/12)

श्रीकृष्णावतार

स्वामी ब्रह्मानन्द

गतांक से आगे.....

बाँसुरी का श्रीकृष्ण प्रेम- श्रीकृष्ण की बांसुरी जैसी प्रेयसी न तो पटरानियां, न गोपियां और न कोई भक्तात्मा हुई। संसार में सबके जड़ चेतन ने भगवत्प्रेम को प्रकट किया या उनसे हो गया किन्तु वंशी ही एक ऐसी भगवान् की प्रेयसी रही जिसका प्रेम अगाध शान्त सागर की तरह मौन रहा। अनन्त संयोग-वियोग की लहरें अपने में लीन रखकर वंशी ने कभी प्रकट नहीं किया। भगवान् के वेणु-वादन से सूखे पेड़ हरे हो जाते हैं, शुष्क काष्ठ खण्ड पल्लवित-पुष्पित हो जाते हैं। पशु-पक्षी कृष्ण के पास आकर वंशी की ध्वनि में समाधिस्थ हो जाते हैं। यमुना का प्रवाह उलट जाता है। आकाश में देव विमान छा जाते हैं। गोपियां घर-वन में बेसुध हो जाती हैं वे लोकलाज, कुल की मर्यादा त्यागकर कृष्ण की ओर दौड़ पड़ती हैं।

श्रीकृष्ण के साथ रास विहार करते हुए गोपियां मानवती हो गयी।

भगवान् श्रीकृष्ण अन्तर्ध्यान हो गये। संग में केवल श्री राधिका जी को ले गये। श्री राधा जी ने भी अपने को सर्वश्रेष्ठ मानकर मानवती होकर श्रीकृष्ण से कहा- **'न पारयेऽहं चलितुं नय मां यत्र ते मनः।'**

प्यारे! मुझसे अब नहीं चला जाता। अब तुम जहां चलना चाहो, अपने कंधे पर चढ़ाकर ले चलो।

इस प्रकार सबका प्रेम प्रकट हुआ, किन्तु वंशी मूक कृष्ण सेवा में लगी रही। श्रीकृष्ण सुखे सुखित्वं' का उसका जीवन रहा। अन्दर से सदा पोली अर्थात् अभिमान रहित, पूर्ण समर्पित ही रही। उसने कभी अपना प्रेम प्रकट नहीं किया, आनन्द प्रकट नहीं किया। यदि उसमें भी शुष्क वृक्षों, शुष्क काष्ठों की तरह नव पल्लव फूट पड़ते, हरी भरी हो जाती तो भगवान् के संगीत में बाधा आती। अतएव बाँसुरी के आभ्यन्तरिक प्रेम को कोई-कोई ही समझ सका। दूर गयी हुई गायों का नाम पुकारना, जड़-चेतन प्राणियों को आनन्दित करना, गोपियों को रास विहार के लिये आमन्त्रित करना, गोधन लेकर नन्दगृह से वृन्दावन जाना-आना वेणुवादन के साथ ही होता था। बिना वेणु के श्रीकृष्ण के गोपवेश की पहचान ही नहीं है, उनका व्रज-जीवन ही अधूरा है। उद्धव जी गोपियों को श्रीकृष्ण का संदेश देने जब वृन्दावन आये थे, व्रज-प्रेम से प्रभावित कई मास तक वहीं रहे। श्रीकृष्ण भगवान् की लीला स्थलियों का दर्शन करते, उन्हीं की चर्चा सुनते। इस प्रकार कई मास तक वहां रहे। जब वहां से वे लौटने लगे तो भगवान् श्रीकृष्ण की प्रिय दो वस्तुएं मां यशोदा और श्री राधा जी ने उद्धव से भिजवायी थीं। कवि श्री जगन्नाथ रत्नाकर जी ने उद्धव शतक में इसका भावपूर्ण वर्णन किया है।

'एक कर राजे नवनीत जसुदा को दियो'
एक कर वंशी वर राधिका पठायी है।

ऐ मेरे मन! तू वहीं चल जहां कान्हा सखा संग यमुना तट पर गौएं चरा रहा है, वंशी बजा रहा है-

चलो मन गंगाजमुना तीर।।
गंगा-जमुना निरमल पानी सीतल होत सरीर।
बंसी बजावत गावत कान्हो संग लियो बलबीर।।
मोर मुकट पीताम्बर सोहै कुण्डल झलकत हीर।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर चरण कंवल पर सीर।।

व्रजरज माधुरी

भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा के लिये गोलोक ही व्रज के रूप में प्रकट हुआ था। ब्रह्मा आदि देवगण, दिव्य ऋषि-मुनि, साधु-सन्त यह जानकर कि मथुरा में सच्चिदानन्द भगवान् श्रीकृष्ण माता देवकी के गर्भ से प्रकट होने वाले हैं, पूर्व से ही वहां आना शुरू कर दिया था। उन अनन्य भक्तों के चरण-स्पर्श से व्रज भूमि दिव्यातिदिव्य बन गयी थी। भगवान् अपने अनन्य भक्तों के तो पीछे-पीछे डोलते रहते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने परमधाम-गमन से पहले उद्धव जी को उपदेश देते हुए कहा- "अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेदंघ्रिरेणुभिः" (भागवत) अपने आपको पवित्र करने के लिये मैं भक्तों की चरणरज लेने के लिये नित्य ही उनके पीछे-पीछे डोलता रहता हूं। ऐसे भक्तों की चरणरज के प्रेमी भगवान् श्रीकृष्ण ने ब्रजरस की माधुरी का रसास्वादन करने के लिये स्वयं गोकुल में बाल लीला करते हुए उसका सेवन किया है। श्री रसखान जी कहते हैं-

धूरि भरे अति सोभित स्याम जू......।" भक्तवर श्री विल्वमंगल जी भगवान श्रीकृष्ण की व्रजरज का प्रेम वर्णन करते हुए कहते हैं-

गोपालाजिर कर्दमे चिहर से विप्राध्वरे लज्जसे
ब्रूषे गोधनहुकृतैः स्तुतिशतैर्मौनं विधत्से विदाम्।
गोकुल पुंश्चलीषु कुरुषे स्वाम्यं न दान्तात्मसु।
जानामि कृष्ण तवांधिपंकजयुगं प्रेमाचलं मञ्जुलम्।।

गोपों के घरों के आंगन कीचड़ से भरे हुए हैं पर व्रजरज के प्रेमी श्रीकृष्ण उस व्रजरज की कीच में कभी लोटपोट हो रहे हैं, कभी बैठकर उसी से खेल रहे हैं। कभी उसी में ता ता थई करके नृत्य कर रहे हैं। कभी गोपियों के ऊपर उसे फेंककर व्रजरज का प्रसाद देकर आनन्द-विभोर हो रहे हैं।

बड़े-बड़े वेदज्ञ ब्राह्मणों द्वारा वेदों के द्वारा स्तवन करने पर आह्वान करने पर भी उनकी यज्ञशाला में जाने में भी संकुचित होते हैं। गौओं के हुंकारमात्र श्रवण करने पर धौरी, धूसरित कृष्णा, के पास दौड़े जा रहे हैं। उनको गले से लगाकर, थपकी देकर प्रेम का दान कर रहे हैं। पर बड़े-बड़े ज्ञानियों की ललित स्तुतियों की ओर भी ध्यान नहीं देते। गोकुल की गोपियों को गोबर का टोकरा उठाने, उनकी गाय दुहने आदि की सेवाओं में परमानन्द के सिन्धु में अवगाहन करते हैं। श्री बिल्वमंगल जी कहते हैं 'मैं जान गया' जान गया- कृष्णा तो उन्हीं के हैं जिनके हृदय में उनके चरणकमल नित्य निवास करते हैं।

श्री श्यामसुन्दर गोचारण करके वृन्दावन से लौट रहे हैं। श्री शुकदेव जी उनकी शोभा का वर्णन कर रहे हैं :- उस समय श्रीकृष्ण की घुंघराली अलकों पर गौओं के खुरों से उड़-उड़ कर धूलि पड़ी हुई थी जिससे उनका मोर मुकुट, मालाओं में गुंथे हुए सुन्दर-सुन्दर जंगली पुष्प सुशोभित हो रहे थे। उनके नेत्रों से मधुर चितवन और मुख पर मनोहर मुस्कान थी। वे मधुर-मधुर मुरली बजा रहे थे और साथी ग्वाल बाला उनकी ललित कीर्ति का गान कर रहे थे। वंशी की ध्वनि सुनकर बहुत सी गोपियां एक साथ ही घरों से बाहर निकल आयीं। उनकी आंखें न जाने कब से श्रीकृष्ण-दर्शन के लिये तरस रही थीं।

एकादशी का दिन था। एक संत वृन्दावन की परिक्रमा कर रहे थे। परिक्रमा मार्ग में एक स्थान पर अकेले खड़ी सुन्दरी सुकुमारी किशोरी बालिका को देखा जो रो रही थी।

पर उपकार वचन मन काया।
संत सहज सुभाउ खगराया।।

के अनुसार संत का हृदय करुणा से भर गया और अनाश्रिता बालिका समझ कर पूछा- पुत्री तुम कौन हो क्यों रो रही हो? बालिका-महाराज मुझ-दुखिया को पूछकर क्या करोगे?

संत- तुम्हारा नाम क्या है, पता क्या है?

बालिका- मुझ दुखिया का नाम-पता पूछकर मुझे क्यों लज्जित कर रहे हैं।

संत- ऐसा कौन सा दुःख है?

बालिका- महाराज मैं मुक्ति हूं।

श्री संत- तब तो तुम बहुत भाग्यवान हो। लाख-लाख लोग तुम्हारी कामना करते हैं।

बालिका- महाराज! यहां ब्रज में तो मेरी दुर्गति ही है। महात्माओं की कुटिया के द्वार-द्वार जाकर खटखटाती हूं। कोई द्वार ही नहीं खोलता। यहां वृन्दावन के महात्मा भगवद्भक्ति के लिये तो लालायित रहते हैं, किन्तु मेरी ओर तो देखते भी नहीं।

महात्मा- अच्छा! यह बात है। देखो मैं मुक्त हूं, पर मुक्ति के बाद भी कुछ शेष रह जाता है। हम निर्गुण-निराकार की साधना तो कर पाये पर उन्हीं के सगुण-साकार रूप के रसास्वादन करने के लिये मुझसे भी महान् श्री सनत्कुमार, श्री नारद जी, श्री शुकदेव आदि महापुरुष भी लालायित रहते हैं। वह शुद्धाभक्ति, प्रेमाभक्ति का रस ही ऐसा है। तुम उनकी प्रियतमा हो, तुम उन्हीं की शरण में जाओ।

मुक्ति ने अपने प्रियतम पर ब्रह्म को कृष्ण रूप में एक हरे-भरे 'पुष्पित' सुगंध से भरे कदम्ब वृक्ष के नीचे त्रिभंगी रूप में खड़े मुरली बजाते हुए देखा और एकटक बौराई सी देखती ही रह गयी। श्री श्याम सुन्दर ने मुस्कराते हुए पूछा- तुम कौन हो, क्या चाहती हो। एक संत के शब्दों में कहा गया-

मुक्ति कहे गोपाल सो मेरी मुक्ति कराय।
जो ब्रजरज ऊपर परै मुक्ति मुक्त है जाय।।

एक गोपी अपनी सखी से कहती है-

मुझे तो बंध मोक्ष की इच्छा व्याकुल कभी न करती है।

मुखड़ा ही नित नव बंधन है, मुक्ति चरण से झरती है।

श्रीकृष्ण के दूत बनकर ब्रज में उद्धव आये। वे गोपियों से मिले और भगवान श्रीकृष्ण का ज्ञान-संदेश प्रदान किया। किन्तु उनके प्रेम को देखकर सब कुछ भूल गये। बहुत दिन रह गये। नन्द- यशोदा, गोप-गोपियों, श्री राधा जी, उनकी सखियों, गोपियों, अन्य पशु-पक्षियों आदि का अनिर्वचनीय प्रेम देखा तो उनका हृदय भी भक्ति के रस से भर गया। उन्होंने आकांक्षा की-

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम्।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा।
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम्।।

मेरे लिये तो सबसे अच्छी बात यही होगी कि मैं इस वृन्दावन धाम में कोई झाड़ी, लता, अथवा औषधि-जड़ी-बूटी ही बन जाऊं। अहा! यदि मैं ऐसा बन जाऊंगा तो मुझे इन गोपियों के चरणों की ब्रजरज निरन्तर सेवन करने के लिये मिलती रहेगी और इस प्रकार उस परम पावन ब्रजरज में स्नान करके मैं धन्य हो जाऊंगा। इन भक्तिमती गोपियों की और उनके चरणों में लगी ब्रजरज का वर्णन कौन कर सकता है। गोपियों ने स्वजनों, सम्बन्धियों तथा लोक-वेद की आर्य मर्यादा का परित्याग करके इन्होंने भगवान् की पदवी, उनके साथ तन्मयता, उनका परम प्रेम प्राप्त कर लिया है। जिसे श्रुतियां, उपनिषदें भी आज तक ढूंढ ही रही हैं। प्राप्त नहीं कर सकीं। उद्धव जी गोपियों की वन्दना करते हुए कहते हैं -

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभक्ष्णिशः।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाक्ति भुवनत्रयम्।।

नन्दबाबा के ब्रज में रहने वाली गोपियों की चरणरज को मैं बारम्बार प्रणाम करता हूं। उसे सिर पर चढ़ाता हूं। इन गोपियों ने जो श्रीकृष्ण का लीला गान किया है वह तीनों लोकों को पवित्र कर रहा है और करता रहेगा। तभी तो श्री शुकदेव जी जैसे महामुनि परमहंसों गति को प्राप्त गोपी-प्रेम

का, उनके रास विहार आदि का भक्तभावपूर्ण ऐसा वर्णन किया है जो अनन्य दुर्लभ है।

श्री सद्गृहस्थ, साधु-संत यमुना जी में स्नान कर आज भी व्रजरज का तिलक लगाकर भगवान् का भजन करते हैं। कुछ भक्त तो सारे शरीर में ही व्रजरज को लगाकर भगवद्भाव में मग्न रहकर ही उपासना करते हैं। एक सेठ जी कोलकाता में करोड़ों का व्यापार करते थे। वैराग्य आने पर, सब त्याग कर श्री कृष्ण के प्रेम में पड़े हुए वृन्दावन आ गये। परम विरक्ति के साथ सखी साधना की। माधुर्यभाव में सिद्धि प्राप्त की। उनका नाम था ललित किशोरी। उनके रचे हुए पदों से उनके त्याग, वैराग्य एवं कृष्ण-प्रेम का पता चलता है :-

तज दीनी जब दुनिया-दौलत फिर कोइके घर जाना क्या।

कंद मूल फल पाय रहैं अब खट्टा मीठा खाना क्या।।

बन-बन फिरना बेहतर हमको रतन भवन नहिं भावे है।

लता तरे पड़ रहने में सुख नाहिन सेज सुहावै है।।

भावे ना दुनिया की बातें दिलवर की चरचा सहती।

ललित किशोरी पार लगावैं माया की सरिता बहती।।

इन्हें व्रजरज से बड़ा प्रेम था। वृन्दावन वास में व्रजरज का सेवन तो करते ही थे। जीवन के अंत में भी उन्होंने एक इच्छा प्रकट की। भक्तों ने उनकी इच्छा के अनुसार व्रजरज का चबूतरा बनाया और उसी में वो लेट गये। भक्तजनों के द्वारा हरि संकीर्तन की मधुर ध्वनि के मध्य, प्रियतम श्याम सुन्दर की सेवा में गोलोक धाम सिधार गये। भगवद्धाम सिधारने से पहले उन्होंने कहा था कि वृन्दावन की गलियों में वृजरज बिछाकर पांव में रस्सी बांधकर मुझे घुमाना है। भक्तों ने वैसा ही किया। कैसा था उनका व्रजरज का प्रेम। ऐसे व्रजरज का सेवन करके अनेक संत हुए हैं जिन्होंने श्री राधाकृष्ण का दर्शन किया। उनके प्रेम ने कभी हंसते-कभी रोते और कभी ध्यान में, उन्हीं की याद में आंसू बहाते, मुस्कुराते- कृष्ण हो, कृष्ण हो, कृष्ण हो और श्याम मेघों की छटा देखकर दौड़ पड़ते जैसे कृष्ण को पकड़ने जा रहे हों।

एक संत थे। व्रज में यमुना किनारे रहते थे। घास-पत्ते से ढककर व्रजरज की दीवाल बनाकर, उसी रज की शय्या बनाकर, अयाचित रूप में जो भिक्षा मिल जाती, उसी से उदर पूर्ति कर, यमुना जल पीकर दिन-रात- राधा कृष्ण, राधा कृष्ण, राधा कृष्ण रटते हुए नाम-साधना में लगे रहते। एक दिन एक निर्धन व्यक्ति अकस्मात् उनके चरणों में बैठकर उनका दर्शन करने लगा। संत उसकी निर्धनता देखकर बोले- भैया तुमको कुछ चाहिए। आगन्तुक-महाराज मैं बहुत निर्धन हूं। परिवार का पालन भी नहीं हो रहा है। इन्हीं यमुना मय्या की कृपा से जी रहा हूं। संत का हृदय करुणा से भर गया और उसी के सामने जहां बैठे थे वहीं व्रजरज को हटाने लगे। थोड़े ही समय में उन्होंने चमकता हुआ पत्थर निकाल कर उसको दिया और कहा-जा, धन ही धन तेरे पास हो जाएगा, किसी से बताना मत। वह भोला आदमी संत को प्रणाम कर उस चमकीले पत्थर को लेकर चल दिया। वह विचार करने लगा कि बाबाजी के पास अवश्य कोई महान वस्तु है जिसके सामने इस पत्थर का कोई मूल्य नहीं होगा। तभी तो उन्होंने मुझको दे दिया। वह वापस आया और संत से अपनी बात कही।

संत-भैया इस व्रजरज में सब कुछ है। इसी की कृपा से हमें सब कुछ मिला है। "परमधन राधे नाम हमार।" उस व्यक्ति की जन्म-जन्म की साधना प्रकट हो गयी। उस संत का वह शिष्य हो गया। उस चमकीले पत्थर को यमुना जी को भेंट कर दिया। वह पारस पत्थर था। अब वह राधा कृष्ण,

राधा कृष्ण, राधा कृष्ण पुकारता वन-वन घूमता रहता। संत कहते हैं ब्रज की भूमि भगवान श्रीकृष्ण की विहारस्थली रही है। इसका कण-कण भगवान के पादपद्‌मों के स्पर्श से सच्चिदानन्दमय है। इसकी नदियों, झरनों, जलाशयों आदि का भगवान् ने जलपान किया है। इसके जितने वन हैं, भगवान श्रीकृष्ण ने सर्वत्र कुछ न कुछ लीलाएं की हैं। उनके वृक्ष, कुञ्ज, लता, औषधि, पशु-पक्षी भी भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन से महा भागवत बन गये हैं। आज भी कभी-कभी दिव्य घटनाएं घटती रहती हैं। ब्रज की रज संतों की सर्वस्व है। तीर्थयात्री जाते हैं तो वहां से कुछ न कुछ ब्रज की रज प्रसाद रूप में लाते हैं। लोग माथे में उसे लगाते और मुख में डालते हैं, उनकी अनेक मनोकामनाएं पूरी होती हैं। वे ब्रजरज का भक्तों में प्रसाद बांटते हैं।

एक दिन एक ग्वालिन अपने खेत को जोत रहे पति के लिये भोजन-सामग्री टोकरे में लेकर अपने सिर पर रखकर घर से चल दी। आगे चलते-चलते ग्वालिन के एक पांव की चप्पल टूट गयी तब वह उसे अपने टोकरे में रखकर फिर चल पड़ी। अब एक पांव में चप्पल और एक पांव में कुछ नहीं। उसकी चाल में विघ्न पड़ा तो उसने दूसरी चप्पल को भी टोकरे में रखा और चल पड़ी। एक महात्मा जी वैष्णव तिलक लगाये, गले में तुलसी की माला धारण किये हुए निकट आ गये थे। उन्होंने ग्वालिन की सब बातें देख ली थीं। अतः उनसे रहा नहीं गया। महात्मा जी ने ग्वालिन से कहा- देवी। टोकरे में क्या लिये हो? ग्वालियन- महाराज। राधे-राधे। टोकरे में रोटियां हैं और दाल है। पति खेत में हल चलाय रहयो है। दोपहर हो गयी है। उन्हीं के ताईं भोजन लिये जाऊं हूं।

संत जी-ओ हो हो। तुमने तो सारा भोजन ही अशुद्ध कर दिया। इसी टोकरे में भोजन और इसी में तुमने अपनी चप्पले' डाल रखी हैं। राधे-राधे। यह तुमने क्या किया, ठीक नहीं किया।

ग्वालिन- राधे-राधे। महाराज मोय जान परयो, तुम नये-नये ब्रज में आयो है। तुमने भागवत में कथा नाय सुनी। हमारे श्याम सुन्दर तो बालपन में ही ब्रजरज का स्वाद होने ताईं ब्रज की माटी। पायो है। या रज में ब्रह्मरस मिल्यो है। तोय नाय पतो। इन चप्पलन में लगी रज सो भोजन भगवत्-प्रसाद है गयो। अच्छा बाबा। राधे-राधे मोय देर है रही है, वो मेरी राह देख रहे हैंगे। चलते-चलते मुड़कर देखा, बाबा जी उसे टुकुर-टुकुर देख रहे हैं। महात्मा जी के माथे पर रामानन्दी तिलक देखकर ग्वालिन फिर बोली- बाबा। लागत है अयोध्या से तुम आयो है। अरे तुमने कथा नाय सुनी- तुलसीदास जी ने एक संतों के भण्डारे में एक संत के चमड़े के जूते में खीर लेकर प्रसाद पायो हतो और अपने को धन्य मान्यो। अच्छा बाबा-छिमा करियो। राधे-राधे।

वृन्दावन के निधुवन, सेवा कुञ्ज, टटिया स्थान और परिक्रमा मार्ग आदि की पावन ब्रजरज तीर्थयात्री अपने-अपने घर ले जाते हैं। यह ब्रजरज रोगों का नाश करने में, प्रेतबाधा को दूर करने में, चंचल मन को एकाग्र करने में, भावभक्ति जगाने में और श्री राधा कृष्ण के दर्शन कराने में भी सक्षम है, ऐसा संतों का कहना है। अतएव महात्माजन आज भी ब्रजरज का अनेक प्रकार से सेवन करते हैं। वृन्दावन तो श्री राधाकृष्ण की विहारस्थली ही है। प्रिया-प्रियतम श्री राधाकृष्ण।

कालिन्दीतीरे कोकिलाकेलिकीरे
गुञ्जापुञ्जे देवपुष्पादि कुञ्जे।
कम्बुग्रीवौ क्षिप्तबाहू चलन्तौ
राधाकृष्णौ मंगलं मे भवेताम्।।

श्री यमुना नदी के तट पर कोयल, तोता आदि पक्षी कलरव कर रहे हैं। वहां गुञ्जा, देवपुष्प आदि की कुञ्जें सुशोभित हो रही हैं। उन कुञ्ज गलियों में एक-दूसरे के गले में अपनी बाहें डाले हुए विहरण करने वाले प्रिया-प्रियतम श्री राधाकृष्ण मेरा मंगल करें।

-क्रमशः

बसंत पंचमी पर विशेष

ऋतूनां कुसुमाकरः

(परम पूज्य गुरुदेव भगवान के दिव्य प्रवचनों पर आधारित)

◆ गुरु मां गीतेश्वरी (गीता भास्कर)

हमारी हिन्दू संस्कृति में बसंत पंचमी बहुत बड़ा पर्व माना गया है। इस पूर्ण तिथि पर माता सरस्वती, जो विद्या की देवी हैं, उनकी जयन्ती मनाई जाती है। पीले बसंती फूलों से माता सरस्वती की सजावट की जाती है। किसी भी नई विद्या का आरम्भ इसी दिन करने से अवश्य सफलता मिलती है। शिष्यगण अपने गुरु के पास आते हैं। सद्गुरु का भावपूर्ण पूजन करके गुरु को प्रसन्न करते हैं। गुरु से मन-इच्छित फल को पाते हैं। प्रयागराज आदि तीर्थों पर गंगा-यमुना स्नान करके माता सरस्वती का कृपा रूपी वरदान पाते हैं। बसंत पंचमी सर्वसिद्ध मुहूर्त है। ज्योतिष के अनुसार इस दिन कोई भी नया काम करने से सिद्धि और सफलता मिलती है। सर्वश्रेष्ठ सिद्धि है आध्यात्मिक उन्नति, उसकी कामना करनी चाहिए, जो सद्गुरु-कृपा से मिलती है।

वाग्देवी सरस्वती सौम्यस्वरूपा सद्गुणों की दात्री हैं तथा सभी देवों की रक्षिका हैं। इसी दिन को वागीश्वरी जयन्ती तथा श्रीपंचमी एवं बसंत पंचमी कहा जाता है। भगवती सरस्वती सत्वगुणसम्पन्न हैं। इनके कई नाम हैं, जिनमें सोमलता, वाक्, वाणी, गी, सरस्वती, ब्राह्मी, भाषा आदि प्रसिद्ध हैं। सरस्वती माता सारे संसार की निर्मात्री हैं और उनके प्रसन्न होने पर मनुष्य समस्त सुखों की प्राप्ति करता है।

शास्त्रों के अनुसार माता सरस्वती ब्रह्मस्वरूपा कामधेनु हैं, ये ही वाग्देवी, विद्या और बुद्धि हैं एवं शास्त्र ज्ञान को प्रदान करने वाली हैं। सृष्टि के उत्पत्ति-काल में भगवान् की इच्छा से आद्याशक्ति ने अपने को पांच भागों में विभक्त कर लिया था। वे हैं- राधा, पद्मा, सावित्री, दुर्गा और सरस्वती जो भगवान के विभिन्न अंगों से होने वाली देवी सरस्वती कहलायी। गीता में भगवान ने सरस्वती को अपनी विभूति स्वरूप बताया-

'कीर्तिः श्रीर्वाक् च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा।'

बसंत पंचमी को प्रातःकाल उठकर गंगास्नान करना चाहिए, किसी तीर्थ पर न जा सकें तो घर पर ही स्नान करने के पात्र में पहले गंगाजल डालकर फिर ऊपर से पानी डालने से पूरा जल गंगाजल बन जाता है, उससे नहाना चाहिए। फिर श्रद्धापूर्वक मां शारदा की पूजा करनी चाहिए। उस दिन अपने दीक्षामंत्र का खूब जप और ध्यान करना चाहिए। माता सरस्वती का यह श्लोक प्रसिद्ध है-

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता,
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना,
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता,
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा।।

देवी सरस्वती का वास पुस्तक और लेखनी में भी माना गया है, इसलिये बसंत पंचमी के दिन अपने इष्ट ग्रन्थ, इष्ट शास्त्र की पूजा करनी चाहिए। पुस्तक, शास्त्र आदि की पूजा के समय निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण किया जाता है-

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीम्,

वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्याध कारापहाम।

हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां,

वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्।।

महर्षि वाल्मीकि, व्यास, वसिष्ठ, विश्वामित्र, शौनकादि ऋषियों ने सर्वदा मां सरस्वती की आराधना की है। भगवती सरस्वती की उपासना (काली के रूप में) करके ही कवि कालिदास ने ख्याति पायी। गोस्वामी तुलसीदास रामचरितमानस में कहते हैं-

पुनि बंदऊ सारद सुरसरिता।
जुगल पुनीत मनोहर चरिता।।
मज्जन पान पाप हर एका।
कहत सुनत एक हर अविवेका।।

अर्थात्- मां सरस्वती और देवी गंगा दोनों एक समान हैं, दोनों पवित्रकारिणी हैं। एक सर्वपापहारिणी और एक अविवेकहारिणी है।

भगवती सरस्वती की कृपा-प्राप्ति के लिये कुछ नियमों का पालन करना आवश्यक है। वेद, पुराण, गीता, रामायण, सद्ग्रंथों का आदर करना चाहिए और उनको पवित्र स्थान पर रखना चाहिए। बिना आसन के जमीन पर कभी नहीं रखना चाहिए, अपवित्र हाथ से छूना नहीं चाहिए, अपवित्र अवस्था में स्पर्श नहीं करना चाहिए, अनादर से फेंकना नहीं चाहिए, क्योंकि ये सद्ग्रंथ देवी सरस्वती की वाङ्मयी मूर्ति हैं।

प्रातःकाल उठकर नियमपूर्वक हाथ के मध्य भाग में माता सरस्वती का ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार विद्या और बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी की महिमा अपार है। देवी सरस्वती की द्वादश नामावली बड़ी प्रसिद्ध है-

'प्रथमं भारती नाम द्वितीयं च सरस्वती।
तृतीयं शारदा देवी चतुर्थं हंसवाहिनी।
पंचमं जगती ख्याता षष्ठं वागीश्वरी तथा।
सप्तमं कुमुदी प्रोक्ता अष्टमं ब्रह्मचारिणी।
नवमं बुद्धिदात्री च दशमं वरदायिनी।
एकादशं चन्द्रकान्ति द्वादशं भुवनेश्वरी।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसंन्ध्यं यः पठेन्नरः।
जिह्वाग्रे वसने नित्यं ब्रह्मरूपा सरस्वती।।

विद्वद्‌गण भी प्रवचन करने के पूर्व माता सरस्वती की आराधना इस प्रकार करते हैं-

'नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्।।

बसंत पंचमी के दिन यज्ञ, दान और तप की विशेष महिमा है। अनेक प्रकार से यज्ञ करके इस दिन को सफल बना सकते हैं। इस दिन थोड़े ही किये हुए दान का अक्षय फल होता है। शरीर, वाणी और मन से साधना करके इस पुण्य दिन को सिद्ध कर सकते हैं।

भगवान ने गीता में कहा है कि ऋतुओं में बसंत ऋतु मैं ही हूं **'ऋतूनां कुसुमाकरः'।**

इस बसंत ऋतु की क्या विशेषता है? बारह महीने और छः ऋतुएं हैं। हर ऋतु के दो-दो महीने हैं। ग्रीष्म ऋतु के महीने हैं ज्येष्ठ और आषाढ़। वर्षा ऋतु श्रावण और भाद्रपद महीनों में आती है। आश्विन और कार्तिक महीनों की ऋतु है शरद ऋतु। हेमंत ऋतु के महीने हैं मार्गशीर्ष और पौष। शिशिर ऋतु आती है माघ और फाल्गुन महीने में और बसंत ऋतु आती है चैत्र और वैशाख महीने में। भारत देश ही एक ऐसा देश है जिसमें छः ऋतुएं आती हैं। शेष जितने भी देश हैं उनमें किसी देश में दो, तीन या चार ऋतुओं का समय होता है। बसंत ऋतु चैत्र और वैशाख महीने में आती है। इन दो महीनों में न ज्यादा सर्दी होती है और न ज्यादा गर्मी होती है। वर्ष की प्रथम ऋतु बसंत ही है। मौसम बड़ा प्यारा होता है। सब ओर विकास ही

विकास होता है, नये सुंदर रंग-बिरंगे फूल खिलते हैं। पेड़ों में नयी कोंपले, नये हरे-हरे पत्ते लगते हैं। चेहरों पर मुस्कान होती है। प्रकृति का जर्रा-जर्रा खिल उठता है।

'सुजलां सुफलां मलयजशीतलाम्,
शस्यश्यामलां मातरम्, वन्दे मातरम्।'

वास्तव में यही तस्वीर बसंत ऋतु में दृष्टिगोचर होती है। पतझड़ के बाद बसंत ऋतु आती है। जब सब पेड़ों के पत्ते झड़ जाते हैं, सब जगह शून्य का, मृत्यु सा दृश्य होता है। पतझड़ मृत्यु की, निराशा की निशानी है तो उसके बाद ही नव जीवन, नव गति, नव लय, नव ताल भरती है बसंत ऋतु। जो नवजीवन, नवआशा का नया संदेश देती है।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि Shelley ने अपनी प्रसिद्ध कविता Ode to the West Wind में लिखा है-

O winds, if winter comes
Can spring be far behind.

गीता में भगवान ने हमें यह उपदेश दिया है कि संसार में कोई चीज स्थायी नहीं है।

'आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः'
संसार की ये ऋतुएं अर्थात् सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय, यश-अपयश, आने-जाने वाली चीजें हैं, अतः विवेकी पुरुष इसमें रमण नहीं करते। साधक अपने परम लक्ष्य पर अटल रहता है। न दुःख में घबड़ाता है और न सुख में फूलता है। हिमालय की तरह अचल और अटल रहता है। **'खड़ा हिमालय बता रहा है, डरो न आंधी पानी से'**, **'यह भी गुजर जाएगा'** का मंत्र याद रखेंगे तो सुख-दुःख से ऊंचे उठ जाएंगे, फिर चाहे वो पतझड़ हो या बाहर हो। **'पद्मपत्रमिवाम्भसा'** संसार में कमल के पत्ते की तरह निर्लिप्त होकर संसार-सागर से पार हो जाएंगे।

सच्चा बसंत क्या है? ब+संत अर्थात् जहां संत बसते हैं, वहीं बसंत है। वहीं आनंद, वहीं मंगल है। संत वृत्ति में एकता है। संत से है संतरा। संतरे का रंग अंदर-बाहर से एक जैसा होता है। वैसे ही संत-हृदय अंदर-बाहर से एक जैसा होता है, उनका हृदय सरल होता है। संतरा अंदर से अलग-अलग होते हुए भी बाहर से एक है, इसलिये इसका नाम संत पर पड़ा। परंतु इसके विपरीत खरबूजा अंदर से एक जैसा होते हुए भी बाहर से अलग-अलग दिखाई देता है, इसलिये इसका नाम पड़ा खरबूजा। खर कहते हैं गधे को और बूज कहते हैं बुद्धि को, जिसकी बुद्धि गधे जैसी हो, जो एकत्व के महत्व को नहीं जानता, नहीं समझता। संत बुद्धि सबको उस परमात्मा का अंश मानकर पुण्यात्मा और पापी में अंतर नहीं रखती। संत सबको प्रेम देते हैं।

नये वर्ष का प्रारम्भ भी बसंत ऋतु में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को नवरात्रों के आरम्भ के साथ होता है। इसी ऋतु में होली, जो आनंद और मस्ती का त्यौहार है, आती है।

हमारे परम पूज्य, परम आराध्य गुरुदेव भगवान का पुण्य जन्मोत्सव भी इसी ऋतु में होली के पर्व पर आता है। श्री सद्‌गुरुदेव भगवान ने नव बसंत के समान ही समस्त मानव जाति को मृत्यु से अमृत की ओर, असत् से सत् की ओर और अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने का बीड़ा उठाया। गीता-ज्ञान-प्रकाश से जीवों का उद्धार किया। जीवों के पतझड़ को बसंत में बदल दिया। गीतापाठी को हर दुःख में सुख का भास होता है। महाराजजी कहते थे कि गीतापाठ मेरा प्राण है। समस्त संसार में महाराजजी ने द्वादश अध्याय भक्तियोग का प्रचार किया। उस प्रचार का अब बड़ी तेजी से विस्तार भी हो रहा है जिससे हमारे सद्‌गुरुदेव भगवान का प्राण आज भी जीवित होकर सबका कल्याण कर रहा है। शुभं भूयात्।

यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम्

◆ श्रेयानन्द

भगवान श्रीकृष्ण एकमेव अद्वितीय ब्रह्म हैं। उनकी लीलायें नित्य नवीन हैं। जब जिस भक्त के लिये जैसा समझते हैं, वैसी ही अहैतुकी कृपा करके प्रकट हो जाते हैं।

'यत्र प्रविष्टः सकलोऽपि जन्तुरानन्द सच्चिद्घनतामुपैति'

'सत्य ज्ञानानन्तानन्द मात्रैक रस मूर्तयः'

भगवान सच्चिदानन्दघन सर्वव्यापी सबमें आनन्ददायक हैं। भगवान सत्य-ज्ञान-अनन्त आनंद के एकमात्र रस रूप हैं। मुक्त मुनि जिस फल को ढूंढ़ने में निमग्न हैं, व्यग्र हैं, उसी को देवकी रूपी वृक्ष ने प्रकट किया, यशोदा ने पकाया, गोपियों ने उसका उपभोग किया।

मुक्त मुनीनां मृग्यं किमपि फलं देवकी फलति।

तत् पालयति यशोदा प्रकाममुपभुञ्जते गोप्यः।।

उसी प्रेम रस का पान अर्जुन कर रहा है। भगवान कहते हैं कि अर्जुन को उनकी प्रसन्नता के ही कारण, अनुग्रहपूर्वक अपनी योगशक्ति के प्रभाव से परम तेजोमय सबका आदि अनन्त विराट रूप दिखाया जोकि अर्जुन के सिवाय, किसी दूसरे के द्वारा पहिले नहीं देखा गया।

भगवान ने यह रूप इदम् शब्द के द्वारा बताया कि जैसा अर्जुन ने विराट रूप देखा वैसा किसी अन्य ने नहीं देखा। भगवान ने यह विराट भयंकर रूप प्रसन्न होकर अर्जुन को दिखाया। भगवान की भयंकर लीला का दर्शन अर्जुन भगवान की अनुग्रह कृपा पाकर ही देख सका है। क्योंकि भगवान के अनेकों रूप और अनेकों नाम हैं।

यस्य स्मरण मात्रेण जन्म संसार बंधनात्।

विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे।।

नमः समस्त भूतानामादिभूताय भूभृते।

अनेक रूप रूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे।।

भगवान के लीला विग्रह अनेकों रूपों में भासित हो रहे हैं। बद्रिकाश्रम में भगवान तप-लीन हैं। तो रामेश्वरम् में भक्ति, शिव-उपासना करते हुए धनुष-बाण से पराक्रम में लीन हैं। द्वारिकापुरी में वैभव-लीला में रत हैं, तो जगन्नाथपुरी में भोजन में व्यस्त हैं। भगवान ने चौथे अध्याय के छठे मंत्र में कहा कि वह अपनी योगमाया से प्रकृति को अधीन करके प्रकट होते हैं। अतः लीला तो उनकी स्वयं की ही है, किंतु होती है भक्त के कल्याण हेतु भक्ति की इच्छानुसार। तभी तो भगवान ने अर्जुन से कहा कि उसने जैसा दर्शन मांगा, भगवान ने दर्शन दिया। अब अति हो गई तो अर्जुन व्याकुल हो गया। भगवान कहते हैं- भैया, तुमने ही तो कहा था तो मैंने दिव्य दर्शन कराया। कोई भक्त कहता है कि लाला, कमर पर हाथ रखकर नाचो तो मैं नाचता हूं।

शेष गनेश महेश दिनेश सुरेशहु जाहि निरंतर गावैं।

जाहि अनादि अनन्त अखंड आछेद अभेद सुवेद बतावैं।।

नारद से शुक व्यास रचे पचि हारे तऊं पुनि पार न पावैं।

ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं।।

जो लाला लीलाधर मधुर नृत्य करता है वही इतना भयंकर उग्र हो गया कि अर्जुन जैसे योद्धा के नेत्र बंद हो रहे हैं। वह नेत्र बंद करके भी उक्त दर्शन से मुक्त नहीं हो सकता। भक्त तो भगवान

के ही दर्शन नेत्र बंद करके भी करता है और खुले नेत्र से भी वही दर्शन करता है। गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं–

जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।

बंदउं सबके पद कमल सदा जोरि जुग पानि।।

जो श्याम सुंदर के दर्शन करता है उसके लिये– **'जित देखूं तित श्याम मयी है।'** जो लाला के दर्शन चाहता है वह सर्वत्र लाल ही लाल देखकर कीट भृंग न्याय के अनुसार लाल हो जाता है।

लाली मेरे लाल की जित देखूं तित लाल।

लाली देखन मैं चली मैं भी हो गई लाल।।

भगवान का रूप भक्त के अधीन है। भगवान के रूप की रचना भक्त करता है। भगवान की रचना जगत है। किंतु जगदीश्वर के रूप का रचयिता भक्त है। अपनी कल्पना, अपनी भावनानुसार भक्त भगवान के रूप को रचता है। **'भगवान भगत के वश में होते आये।'**

श्रीमद्वल्लभाचार्य जी के भावानुसार भगवान के अधर मधुर हैं,

मुख मधुर है, नेत्र मधुर हैं, हास्य मधुर है, हृदय मधुर है,

गति मधुर है, वचन मधुर हैं, चरित्र मधुर है, वस्त्र मधुर है,

अंग–भंगी (टेढ़ी छटा) मधुर है, चाल मधुर है, भ्रमण मधुर है,

श्री मथुराधिपति का सब कुछ मधुर है। भगवान ने भक्त के भाव को पुष्ट कर दिया।

अर्जुन ने भगवान के ऐश्वर्य भाव को देखना चाहा तो भगवान ने उसे दिव्य चक्षु प्रदान किये। क्योंकि भौतिक नेत्र उसके नष्ट हो जाते यदि भगवान उसे दिव्य चक्षु न प्रदान करते। दिव्य चक्षु प्रदान करना ही परम अनुग्रह है। भगवान ने उसे द्विभुज से चतुर्भुज और चतुर्भुज से विश्व–विराट–विकराल रूप का दर्शन कराया। और सृष्टि का सृजन, पालन, संहार एक साथ ही दिखा दिया। उस रूप का दर्शन करने में ब्रह्मा जी भी सक्षम नहीं हैं। भगवान शिव ने मोहिनी रूप दर्शन की कामना की तो मोहिनी रूप के दर्शन तो मिले किंतु दर्शन करते ही विवेक नहीं रहा और उस रूप पर पागल होकर स्खलित अवश्य हो गये। भगवान ने उस परम शक्ति को अपनी अंजलि में धारण करके हरिहर पुत्र भगवान आयप्पा को उत्पन्न कर दिया और शबरीमाला पर्वत शिखर पर विराजमान कर दिया।

भगवान का यह तेजोमय रूप सहस्र सहस्र सूर्यों के एक साथ उदय होने पर भी जो प्रकाश हो उससे कई हजार गुना अधिक प्रकाशवान है।

यहूदी मूल के अमेरिकन वैज्ञानिक ने 06 अगस्त 1945 को हीरोशिमा पर परमाणु प्रहार करने के बाद अपनी प्रतिक्रिया में 11वें अध्याय के 12वें मंत्र का उल्लेख किया था–

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।

यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।

भगवान का यह विराट रूप कैसा है–

'राजन्ते विविधानि वस्तूनि यस्मिन्निति विराट्'

अर्थात् जिसमें विविध प्रकार की वस्तु शोभायमान हों, उसे विराट कहते हैं। भगवान में एक साथ अनेक विरोधाभास हैं। यदि जन्म लीला है तो मृत्यु लीला भी है। तो पालन लीला और प्रेमलीला भी है। संयोग के साथ वियोग भी है।

विराट रूप का वर्णन इस प्रकार है–

व्यूहमूर्तिर्विराट चतुर्दशलोकात्मकस्तस्य ब्रह्माण्डकर्परयन्त, आकाशः शिरः चन्द्र सूर्यो नेत्रे प्रागादि दिशः श्रोत्रे, अन्तरिक्षलोको घ्राणम्, मेरुः पृष्ठवंशः शिखरत्रंय भुजकण्ठाः, प्रत्यन्तपर्वताः पृष्ठपार्श्ववक्षांसि, उपपर्वताः शालमाल्यादीनि, समुद्राःरक्तं, लताः स्नायूनि, तृणवृक्षाः रोमाणि, भूमिः कुक्षिः, द्वीपा वलयः,

भूरेखा रोमराजिः, भूमध्य प्रदेशो वास्तिः, शेषःशिष्णम् दिग्दन्तिपंक्तिनिर्तम्बोरूभागः। अतलादिसप्तकं करि पादान्तरालः कूर्म पादो इति।। (शंकरविजय प्रकरण)

भगवान के विश्वरूप का ऐसा ही वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में किया है-

विस्वरूप रघुवंस मनि करहु बचन विश्वासु।
लोक कल्पना बेदकर अंग अंग प्रति जासु।।

पद पाताल सीस अजधामा। अपर लोक अंग अंग विश्रामा।।

भृकुटि विलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घन माला।।

जासुघ्रान अश्विनीकुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।।

श्रवन दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निजबानी।।

अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला।।

आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।।

रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा।।

उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना।।

अहंकार शिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान।।

अब यह संशय उठता है कि भगवान तो भक्तों के भावानुसार अपना रूप पहले भी दर्शन कराते आये हैं, किंतु ऐसा अन्य ने पहले कभी किसी ने कहीं नहीं देखा। इसका कारण क्या है। भगवान माता कौशल्या के कहने पर अवतार के समय चतुर्भुज रूप से बालक राम बन गये और रोना आरम्भ कर दिया। भगवान को राजा मनु और रानी शतरूपा ने पुत्र रूप में मांगा था। अतः माता कौशल्या के समक्ष अवतरित होते ही चतुर्भुज रूप में प्रकट हुये।

भए प्रकट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।

हर्षित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप निहारी।।

लोचन अभिरामा तनु घनश्यामा निज आयुध भुजचारी।

भूषण बनमाला नैन विसाला सोभा सिन्धु खरारी।।

माता कौशल्या कहती है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही आपका अंश है वह उदर में कैसे धारण किया गया, आश्चर्य है।

ब्रह्म जो व्यापक विरज अज अकल अनीह अभेद।

सो कि देह धरि होय नर जाहि न जानत बेद।।

किंतु भगवल्लीला अलौकिक है। अज, अनादि, अभेद, विरक्त ब्रह्म जिसे वेद नहीं जानते वह देह धारण कर सकता है क्या? गोस्वामी जी स्वयं उत्तर देते हैं कि हां यदि भक्त चाहे तो उन्हें अपनी इच्छानुसार गोद में खिला सकता है।

व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या के गोद।।

भगवान भक्त के प्रेम और भक्ति के अधीन हैं। परम स्वतंत्र भगवान पूर्ण परतंत्र हैं। उनकी अपनी कोई इच्छा नहीं। **प्रबल प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा** भगवान परवश हैं परबस नहीं स्वबस हैं। क्योंकि भगवान और भक्त में भेद कहां। भगवान भक्त एक हैं अभेद हैं। भगवान अपने भक्त के अधीन, अतिथियों के चरण धोते हैं, जूठी पत्तल उठाते हैं, रथ हांकते हैं, गायें चराते हैं, वस्त्र बन जाते हैं। दुर्योधन के चरण नंदा नाई बनकर दबाते हैं। और हमारे लाला तो छटांक भर छाछ के लिये नाचते हैं। हे प्रभु, तू

कितना कृपालु है। गोवर्धनधारी पर्वत धारण करता है। माता कौशल्या को भगवान ने एक साथ दो दो राम बनके दिखलाये जबकि माता सती को एक ही राम दिखाई दिया था। **'राम रूप दूसर नहि देखा'** माता कौशल्या को एक राम पालने में तो दूसरा भोजन करता हुआ एक साथ दिखाई दिया।

इहां उहां दुइ बालक देखा। मति भ्रम मोरि कि आन बिसेषा।

देखि राम जननी अकुलानी। प्रभु हंसि दीन्ह मधुर मुसकानी।।

देखरावा मातहि निज अद्‌भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड।।

माता कौशल्या ने बालक राम को पालने में सुलाकर इष्टदेव को भोग लगाया तो भोग तो स्वीकार करना ही था। अत: दोनों लीलायें खाने व सोने की एक साथ घटित हुईं। भगवान ने कागभुशुण्डि को भी विश्वरूप दर्शन कराया। भगवान की सगुण लीला का रहस्य निर्गुण से भी गूढ़ है।

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।

सगुन अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ।।

काकभुशुंडि जी कहते हैं-

जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहूं न समाय।
सो सब अद्‌भुत देखेउं बरनि कवनि बिधि जाय।।
एक एक ब्रह्मांड महुं रहउं बरष सत एक।
एकहि बिधि देखत फिरउं मैं अंड कटाह अनेक।।

भगवान श्रीकृष्ण ने बाललीला करते हुए माता यशोदा को दिखाया कि उनके मुख में आकाश, अंतरिक्ष, ज्योतिर्मण्डल, दिशायें, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, वायु, समुद्र, द्वीप, पर्वत, नदियां, वन, समस्त चराचर प्राणी स्थित हैं-

पीतप्रायस्य जननी सा तस्य रुचिरस्मितम्।
मुखं लालयती राजञ्जृम्भतो ददृशे इदम्।।
खं रोदसी ज्योतिरनीक माशा:।
सूर्येन्दुवन्हि श्वसनाम्बुधींश्च।।
द्वीपान् नगांस्तुद्दुहितॄर्वनानि।
भूतानि यानि स्थिरजङ्गमानि।।
(श्रीमद्‌भागवत पुराण- 10/7/36)

वसुदेव जी भगवान की विनती करते हुए कहते हैं कि आप परम पुरुष परमात्मा हैं, आप प्रकृति से अतीत हैं, आप केवल अनुभव व आनंद हैं, आप ही बुद्धियों के साक्षी हैं।

विदितोऽसि भवान् साक्षात पुरुष: प्रकते: पर:।

केवलानुभवानन्द स्वरूप: सर्वबुद्धिदृक्।।
(श्रीमद्‌भागवत पुराण- 10/3/3)

माता देवकी विनती करती हैं- 'प्रभो! वेदों ने आपके जिस रूप को अव्यक्त और सबका कारण बतलाया है, जो ब्रह्मज्योति स्वरूप, समस्त गुणों से रहित विकारहीन है। जिसे विशेषण रहित अनिर्वचनीय निष्क्रिय एवं केवल विशुद्ध सत्ता के रूप में कहा गया है, वही बुद्धि आदि के कारण प्रकाशक विष्णु आप हैं।

रूपं यत् तत् प्राहुरव्यमाद्यं ब्रह्म ज्योतिर्निर्गुणं निर्विकारम्।।

सत्तामात्रं निर्विशेषं निरीहं सत्वं साक्षाद् विष्णुरध्यात्मदीप:।।
(श्रीमद्‌भागवत पुराण- 10/3/24)

उपरोक्त प्रसंग प्रस्तुत इस बात को ध्यान में रखकर किया गया है कि माता कौशल्या, देवकी, यशोदा, वसुदेव जी, कागभुशुंडि, कौरव सभा में भगवान ने जो स्वरूप दिखाया वह एकदेशीय था। अर्जुन को दिखाया दिव्य दर्शन सर्वदेशीय व सर्वकालीन है। इस रूप के साथ इदम् विशेषण के साथ परम तेजोमयम्, आद्यम्, अनन्तम् और विश्वम् विशेषण विशेष रूप से देकर भगवान ने यह बताया कि शेष सभी को दर्शन शांत स्थान में हुए, जबकि अर्जुन ने यह दर्शन अशांत युद्ध क्षेत्र में प्राप्त किया। अत: अशांत वातावरण में भी विचलित नहीं होना चाहिए।

सर्व-कामना सिद्ध मंत्र

स्वामी मुक्तानंद

योे न दृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभ परित्यागी भक्तिमान्य: स मे प्रिय:।।
(12/17)

अर्थात् जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न चिंता करता है और न कामना करता है तथा जो शुभ और अशुभ सम्पूर्ण कर्मों का त्यागी है- वह भक्तियुक्त पुरुष मुझको प्रिय है।

एक बार पूज्य गुरुदेव भगवान ने, माघ मास के पावन काल में प्रयाग राज की भूमि पर उपरोक्त मंत्र की महिमा बताई थी। उन्होंने कहा कि जो भी भक्त श्रद्धा-सहित गीता जी के इस एक मंत्र को जीवन का साथी बना लेगा, उसके मन की हर इच्छा पूर्ण हो जायेगी। इस मंत्र में इतनी शक्ति है कि जेल तक की सजा से भी व्यक्ति मुक्त हो जाता है। यह सर्व-कामना-सिद्ध मंत्र है। बड़े से बड़े बन्धन कट जाते हैं।

तब से गुरुदेव की इस बात को पल्ले बांध लिया। इस मंत्र के कार्ड छपवाकर हजारों भक्तों तक, स्कूल व कॉलेज के असंख्य बच्चों तक वितरण किये जा चुके हैं और आगे भी वितरित होते रहेंगे। जिस-जिस ने भी इस मंत्र को जिस भाव से जपा है, उनके मन के भाव तुरन्त पूर्ण होते आये हैं। यदि भक्तों के उन अनुभवों का वर्णन यहां करने लगें तो एक बहुत बड़ा ग्रंथ बन जायेगा। यद्यपि गीता जी का एक-एक मंत्र सिद्ध मंत्र है, तथापि यह मंत्र विशेष सिद्ध है, क्योंकि स्वयं भगवान गुरुदेव ने अपने मुखारविन्द से इसकी महिमा गाई।

इस मंत्र में भगवान ने भक्त के पांच लक्षण बताये हैं। कौन सा भक्त मुझे प्रिय है? बोले- जो खुशी आने पर, सुख आने पर ज्यादा प्रफुल्लित नहीं होता। थोड़ी सी खुशी आने पर हम फूले नहीं समाते और थोड़ा सा दु:ख आने पर जल्दी दु:खी हो जाते हैं, निराश हो जाते हैं तो समझना, अभी हमारी भक्ति कच्ची है। अभी हम पूर्ण भक्त नहीं हैं। युधिष्ठिर जी महाराज ऐसे भक्त थे भगवान श्रीकृष्ण के- जो सुख में ज्यादा प्रफुल्लित नहीं होते थे, अधिक हर्ष नहीं मनाते थे और संकट आने पर दु:खी नहीं होते थे। जब द्यूत-क्रीड़ा में सब कुछ चला गया फिर भी युधिष्ठिर जी के मुख पर कोई ग्लानि न थी। वे प्रत्येक परिस्थिति में सम रहते थे। गीता में भगवान ने कहा-

''समत्वं योग उच्यते'' (2/48)

प्रभु श्रीराम को न तो राज्य पाने की कोई खुशी थी और न ही राज्य खोने का कोई दु:ख था।

प्रसन्नतां यो न गोऽभिषेकत:। तथा न मम्ले नवासदुखत:।

तो यह भक्त के अन्दर पहला गुण है कि वो हर परिस्थिति में सम रहे। जब सुख में अधिक खुशी नहीं मनायेंगे तो उस सुख के चले जाने पर अधिक दु:खी भी नहीं होना पड़ेगा।

अत: भगवान कह रहे हैं- **'न हृष्यति'**।

दूसरा गुण होना चाहिए भक्त में- द्वेष न करे। जो किसी भी भूत-प्राणी के साथ द्वेष नहीं करता, वह भक्त मुझे प्रिय है।

'अद्वेष्टा सर्वभूतानां'' (12/12)

भूत का अर्थ है- जो जन्मता है और मरता है अर्थात चींटी से लेकर ब्रह्मा तक सभी में परमात्मा का स्वरूप देखें। किसी से भी द्वेष न करें। कोई हमारा शत्रु नहीं है। एक मित्र ने हमें दस या पचास

रुपये दे दिये तो कहते हैं कि यह हमारा मित्र अच्छा है और जिसने हमें पचास रुपये नहीं दिये तो कह देते हैं कि यह मित्र हमारा अच्छा नहीं है। इतना कहने पर भी पाप लगता है, क्योंकि भगवान ने स्वयं कहा है- **''गहना कर्मणो गतिः''** (4/17)

द्वेष विष पैदा करता है। द्वेष शब्द द्विष् धातु से बना है, द्विष् में से द् अक्षर हटा दो विष बनता है। द्वेष जीवन को विष-तुल्य बना देता है। स्वयं का जीवन भी नरक बन जाता है। अतः भक्त वह है, जो किसी भी परिस्थिति में, किसी भी व्यक्ति से द्वेष न करे- **'न द्वेष्टि'।**

तीसरा गुण जो भक्त का है- **'न शोचति'** अर्थात् जो चिंता नहीं करता। जो भगवान का बन गया, फिर उसे चिंता कैसी? भगवान अर्जुन को यही तो समझाते हैं कि बस एक मेरी शरण में आ और **'मा शुचः'** अर्थात् चिंता का त्याग कर दे। तू चिंता मत कर, मेरे पर भरोसा रख। गीता का सार भी यही है-

क्यों व्यर्थ चिंता करते हो? किससे तुम व्यर्थ डरते हो? कौन तुम्हें मार सकता है? भगवान कहते हैं **''मैं हूं ना।''**

जो भक्त प्रभु-वचनों पर विश्वास करके अपने जीवन का सारा भार भगवान पर डाल देता है तो स्वयं भगवान उसकी चिंता करते हैं। भक्त का काम है, भगवान का चिंतन करे। चिंता से आज तक किसी समस्या का समाधान नहीं हुआ है और भगवान के चिंतन से आज तक कोई समस्या रही नहीं है, इसलिए 'न शोचति' चिंता न करें। चिंता बीमारी का मूल है।

चौथा गुण है भक्त का- **''न कांक्षति''** अर्थात् जो कामना न करे।

कामनाएं जीव को बांधती हैं। कामना पूरी होती जाये तो लोभ बढ़ जाता है और कामना में विघ्न पड़ने पर क्रोध पैदा होता है-

''काम एष क्रोध एष'' (3/37)

काम, क्रोध और लोभ- ये तीनों नरक के द्वार कहे गये हैं। सांसारिक कामना जीव को नरक की ओर ले जाती है। यदि कामना करनी ही है तो प्रभु-दर्शनों की कामना करें, प्रभु-भक्ति की कामना करें, सत्संग-प्राप्ति की कामना करें। ऐसी कामना बंधन का हेतु नहीं बल्कि मुक्ति का द्वार होती है।

पांचवां और अंतिम लक्षण है भक्त का इस मंत्र में- **''शुभाशुभपरित्यागी''** अर्थात् मैं शुभ और अशुभ कर्मों का त्यागी हूं। शुभ-अशुभ सभी कर्म भगवान के अर्पण कर दे। दूसरा अर्थ है जो भक्त न किसी के शुभ को देखे और न ही किसी के अशुभ को देखे। भगवान कहते हैं कि मैं सबके अन्दर वास करता हूं, फिर भी न मैं किसी के शुभ को देखता हूं और न ही किसी के अशुभ को देखता हूं। जब मैं नहीं देखता तो जीव को क्या अधिकार है देखने का? बस, जो जैसा करता है, उसी के अनुसार उसे फल भोगना पड़ता है। अक्सर व्यक्ति दूसरों के अशुभ देखता है, अवगुण देखता है, दोष व कमियां देखता है। यदि दूसरों के अवगुण देखेंगे, कमियां या अशुभ देखेंगे तो वे अवगुण, वे कमियां अपने अन्दर घर कर जायेंगी। दूसरों के दोष अपने में भर जायेंगे। इसके विपरीत दूसरों के गुण देखेंगे, शुभ बातें देखेंगे तो अपने में गुण भरते जायेंगे। अस्तु, भगवान कहते हैं कि वैसे तो किसी को देखो मत। बस अपनी गाड़ी ठीक रखो। यदि देखने की आदत ही बन गयी है तो फिर दूसरों के गुण देखो यानि शुभ देखो, अवगुण नहीं यानि अशुभ नहीं।

हनुमान जी में यही विशेषता थी। वे हमेशा दूसरों के अवगुणों में भी गुण ढूंढते थे। प्रभु श्रीराम जब लंका पर विजय प्राप्त कर अयोध्या वापिस पधारे, तीनों माताओं को प्रणाम किया। जानकी जी, लक्ष्मण जी और हनुमान जी उनके साथ थे। श्रीराम, जानकी जी व लक्ष्मण जी के प्रणाम करने के बाद बारी

आई हनुमान जी की। तब हनुमान जी पूछ बैठे- हे प्रभु! इससे पूर्व कि मैं तीनों माताओं को प्रणाम करूं, कृपा करके मुझे यह बता दीजिये कि इन तीनों में से आपको वन में भेजने वाली माता कौन थी? प्रभु श्रीराम सुनकर आश्चर्य में डूब गये और बोले- हनुमान! आज खुशी का अवसर है और तुम वन की बात कर रहे हो। इस विषय को यहीं पर समाप्त कर दो। हनुमान जी अपने को रोक नहीं पाये। तब उनके बारम्बार पूछने पर प्रभु बोले- हनुमान! यदि तुम जानना चाहते तो तो सुनो- मुझे वन में इन तीनों में से किसी ने नहीं भेजा। वन में या तो मैं अपनी इच्छा से गया था या फिर मेरा कर्म ही मुझे वन की ओर ले गया।

इतने में कैकेयी अम्बा बोल पड़ी- हनुमान! तुम जानना चाहते हो तो मुझसे जानो। क्योंकि मेरा राम तो किसी को दोष देता ही नहीं। हे हनुमान! मैं ही वो अभागिनी मां हूं, मैं ही वो कलंकिनी मां हूं, मैं ही वो पापिनी मां हूं, जिसने राम जैसे पुत्र को वनवास दिया, वन में भेजा। केकैयी अम्बा बारम्बार रुदन करते हुए अपने बारे में अपशब्द कहने लगी।

हनुमान जी ने सुना तो केकैयी मैया के चरणों में गिरकर साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करने लगे। बोले- हे मां! बस, अब एक भी अपशब्द अपने बारे में और न बोलना। मां बोली- हनुमान! यह क्या कर रहे हो? अच्छा! इस प्रकार दण्डवत् प्रणाम करके तुम मेरा मज़ाक उड़ाना चाहते हो। सारा संसार तो मुझे कलंकिनी मानता है, पापिनी मानता है, तुम भी मेरा मज़ाक उड़ाना चाहते हो तो कोई बात नहीं। क्योंकि मैं हूं भी इसी काबिल। हनुमान जी रोते हुए भावुक होकर बोले- नहीं मां, नहीं! मैं आपका मज़ाक नहीं उड़ा रहा। मैं तो आपको हृदय से प्रणाम कर रहा हूं।

हे मां! आपने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है। कई जन्म लेकर यदि आपके चरण धो-धोकर पीता रहूं तो भी आपके ऋण से मैं मुक्त नहीं हो सकता।

हनुमान जी की बातों को सुनकर प्रभु श्रीराम भी चकित रह गये। सोचा आज हनुमान जी कौन सी लीला कर रहे हैं। कैकेयी अम्बा आश्चर्यचकित होकर पूछने लगी- हनुमान! मैंने और तुम पर उपकार? यह कैसे हो सकता है? जिसने राम जैसे पुत्र को, जानकी जैसी पुत्रवधू को वन में भेज दिया हो, वह मां भला किसी पर क्या उपकार कर सकती है? उस दिन से मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जल रही हूं। जिसे अपने पुत्र भरत ने ठुकरा दिया हो, वह कैसे किसी पर कोई उपकार कर सकती है।

देखो, हनुमान जी किस प्रकार केकैयी अम्बा के दोषों में भी गुण ढूंढ रहे हैं। हनुमान जी से जब पूछा गया, कैसा ऋण? तो वे हाथ जोड़कर बोले- हे मां! आप जानना चाहती हैं कि आपने मुझ पर कौन सा उपकार किया है तो सुनो। मां यदि आप प्रभु श्रीराम को 14 वर्ष के लिए वन में न भेजतीं तो मुझ जैसे अधम जीव को प्रभु श्रीराम के दर्शन कैसे हो सकते थे? हे मां! यदि आप प्रभु श्रीराम को 14 वर्ष का वनवास न देतीं तो इस सेवक को प्रभु के चरणों की सेवा कैसे प्राप्त होती? मुझे प्रभु श्रीराम से मिलवाया तो आपने और प्रभु-चरणों की सेवा दिलवायी तो आपने। ऐसा उपकार मुझ पर करके आपने मुझे अपना ऋणी बना दिया है मां, ऋणी बना दिया है।

हनुमान जी की ऐसी बातें सुनकर प्रभु श्रीराम कृतकृत्य हो गये। उन्हें उठाकर अपने हृदय से लगाकर कहा- वाह हनुमान! वाह! यूं तो आज तक तुमने मेरे बहुत बड़े-बड़े काज संवारे हैं, परन्तु आज तो तुमने मेरी कैकेयी मैया का गौरव बढ़ाकर मुझे अपना ऋणी बना दिया है। इसलिए आज हम तुम्हें दो वरदान देते हैं। पहला जहां मेरा दरबार होगा, मेरे साथ तुम्हारी प्रतिमा भी अवश्य विराजमान होगी। तुम्हारे बिना तो मेरा दरबार भी अधूरा होगा

और दूसरा वरदान देते हुए प्रभु बोले-

चारों युग प्रताप तुम्हारा।
है प्रसिद्ध जगत् उजियारा।

हे हनुमान! चारों युगों में तुम्हारी पूजा होगी। कलियुग में मुझसे भी अधिक तुम्हारे मन्दिर होंगे। जो तुम्हारी पूजा-भक्ति करेंगे, उन्हें मेरे चरणों की भक्ति भी अनायास प्राप्त होगी।

इतने दुर्लभ वरदान क्यों पाये हनुमान जी ने? क्योंकि हनुमान जी में उपरोक्त पांचों गुण थे।

अस्तु, जिस भक्त में ये पांचों गुण आ जाते हैं, वह भगवान को अति प्रिय लगता है। आध्यात्मिक दृष्टि से जो हर्ष-विषाद से अलग हो जाता है- वो **''जीवात्मा''** है। वही जीवात्मा जब किसी से द्वेष नहीं करता तो वो बन जाता है- **'पुयात्मा'**। जब भक्त और आगे बढ़ता है अर्थात् चिंता नहीं करता, तो बन जाता है- **'महात्मा'**। महात्मा को किसी बात की चिंता नहीं होती। जब और अगली स्टेज पार करता है अर्थात् किसी चीज की इच्छा नहीं करता तो बन जाता है- **''धर्मात्मा''**। और जब शुभ-अशुभ का त्याग कर देता है, अर्थात् न किसी के शुभ देखता है और न किसी के अशुभ तो बन जाता है- **'परमात्मा'**। ऐसा भक्त साक्षात् भगवत्स्वरूप हो जाता है।

कोई भी काम अटका हुआ हो, किसी भी प्रकार की कैसी भी समस्या हो, यदि इस मंत्र का श्रद्धा सहित नित्यप्रति कम से कम तीन माला का जप करें तो तत्काल कार्य पूर्ण होता है। किसी के निमित्त इस मंत्र का 11 बार, 21 बार या इससे अधिक पाठ किया जाये तो यदि कोई बीमार है, दुःखी है तो वह स्वस्थ हो जाता है और सुखी हो जाता है। तात्पर्य यह है कि यह मंत्र **''सर्व कामना-सिद्ध मंत्र है''**। जिस किसी भाव से पाठ करें, तुरन्त भाव पूर्ण होता है। बच्चे करें तो पढ़ाई में अच्छे हो जाते हैं। इस मंत्र को जीवन का साथी बनायें, जीवन सुन्दर व सफल होगा।

अंधकार में भटक रहा है नवयुग का इंसान

● लक्ष्मीनारायण महावर

जीवन मूल्यों से विमुख,
भुलाकर सदगीता का ज्ञान,
अंधकार में भटक रहा है,
नवयुग का इंसान।

कर्त्तव्य अधूरा माता-पिता का,
जो अच्छा व्यवहार सिखा न सके,
कर्म अधूरा गुरु का,
जो ज्ञान का दीप जला न सके।।
इसी अधूरे पाठ्यक्रम ने,
छीना लक्ष्य महान।
अंधकार में भटक रहा है।
नवयुग का इंसान।।

ज्ञान अधूरा भटकाता है,
दृढ़, कर्म पथ राही हो,
जल स्वयं छलकता जाता है,
आधी भरी सुराही से,
बीच भंवर में नाव डूबती,
यदि हो केवट नादान,
अंधकार में भटक रहा है,
नवयुग का इंसान।

यदि जग में कुछ करना है,
जीवन में आगे बढ़ना है,
अज्ञान-तिमिर कम करना है,
झोली में यश भरना है,
जागो! कर्म, त्याग, सेवा से
छोड़ दो अपने कदम-निशान।
तब अंधकार के नहीं भटकेगा,
इस युग का इंसान।

भगवत्प्रेम

◆ स्वामी गीता मातेश्वरी (गीता भास्कर)

'प्रेम' शब्द का अर्थ है- प्रीति, प्यार, स्नेह, अनुराग आदि। प्रेम हृदय का एक मधुर भाव है। प्रेम मानव जीवन का स्वभाव है। प्रेम के दो रूप होते हैं- एक लौकिक प्रेम और दूसरा अलौकिक प्रेम। लौकिक प्रेम अर्थात् जो प्रेम सांसारिक व्यक्तियों से किया जाये और संसार की वस्तुओं से किया जाये। अलौकिक प्रेम अर्थात् जो प्रेम केवल प्रभु के प्रति हो, ईश्वर-प्राप्ति के लिए हो। लौकिक प्रेम जीव को बांधता है, परन्तु अलौकिक प्रेम अथवा भगवत्प्रेम जीव को मुक्त करता है। लौकिक प्रेम जीव को बांधता है परन्तु अलौकिक प्रेम अथवा भगवत्प्रेम जीव को मुक्त करता है। लौकिक प्रेम जीव को प्रभु की माया की ओर ले जाता है परन्तु अलौकिक प्रेम उसे माया से दूर हटाकर मायापति की ओर ले जाता है। लौकिक प्रेम स्वार्थी होता है, जबकि अलौकिक प्रेम निःस्वार्थी होता है। लौकिक प्रेम में जीव धोखा खा सकता है, परन्तु अलौकिक प्रेम में तो धोखा है ही नहीं। वहां तो केवल प्रेम ही प्रेम है। क्योंकि अलौकिक प्रेम या दिव्य प्रेम ही भगवत्प्रेम है। प्रेम ही ईश्वर है और ईश्वर ही प्रेम है। वास्तव में भगवत्प्रेम अमृत-स्वरूप है, जिसे पीकर मनुष्य सिद्ध, अमर तथा तृप्त हो जाता है। इसीलिए तो गीता में भगवान ने कहा है :-

"तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्" (10/10)

अर्थात् मेरा भजन प्रेम-पूर्वक करो।

भगवत्प्रेम कोई साधारण प्रेम नहीं है। वह एक प्रकार का अलौकिक प्रेम है, क्योंकि उस प्रेम में मनुष्य के मन का मैल पूर्णतः मिट जाता है और चित्त की शुद्धि होती है। वह भगवान का ऐसा परम भक्त बन जाता है कि सर्वत्र उसे भगवद्-दर्शन होता है। फिर तो वह अपने प्रभु के लिए जीता है और प्रभु के लिए ही मरता है। उसकी प्रत्येक क्रिया प्रभुमय हो जाती है। निर्मल मन वाला ही प्रभु से सच्चा प्रेम कर सकता है व प्रभु का सान्निध्य पा सकता है। मन निर्मल तभी होगा जब हम अधिक से अधिक प्रभु के नाम का जाप करेंगे।

भगवत्प्रेम की साधना जितनी सरल है, उतनी ही कठिन भी है। कठिन इसलिए कि भगवान और भक्त के बीच में एक दीवार है। वह दीवार है-माया की, अहंकार की। जीव संसार में इतना आसक्त हो चुका है कि इस दीवार को फांदकर प्रभु तक पहुंचे कैसे? उसके रोम-रोम में अहंकार भरा है तो वह प्रभु-प्राप्ति करे कैसे? इसलिए भगवत्प्रेम की साधना जीव को माया से हटाने की एक प्रक्रिया है। माया से नाता टूटते ही जीव भगवान से मिलकर फिर एक हो जाता है। भगवान कहते हैं कि ऐसा प्रेमी भक्त तो मेरी आत्मा है। न तो वह मुझसे अलग होता है और न ही मैं उससे अलग होता हूं। ऐसा प्रेमी मुझे बहुत अधिक प्रिय होता है-

तेषां ज्ञानी नित्युक्तः एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।।
(7/17)

भगवत्प्रेम का दर्द तो वही जान सकता है, जिसे यह प्रेम का रोग हो जाता है। बाहर की आग का धुंआ तो देखा जा सकता है, परन्तु हृदय में जो प्रभु-मिलन की आग लगी है, उसका धुंआ कौन देख सकता है? उसे या तो वह देखता है, जिसके अन्दर वह जल रही है या फिर वह देखता है, जिसने वह आग सुलगायी है। इसीलिए कबीर दास जी ने कहा है-

हिरदै भीतर दव बलै, धुआं न परगट होय।

जाके लागी सो लखै, की जिन लाई सोय।।

प्रेम तो वही, जो प्रकट न किया जाये। सीने के अन्दर ही एक आग सी सुलगती रहे, उसका धुआँ बाहर न निकले। प्रीति प्रकाश में न लायी जाये। यह दूसरी बात है कि कोई दिल वाला जौहरी उस प्रेमरत्न के जौहर को किसी तरह जान जाये। वही तो सच्ची लगन है जो हृदय में रहे। अपने प्यारे का नाम मुंह से न निकलने पाये, बस रोम-रोम से उसका स्मरण किया जाये। ऊंचे प्रेमियों की तो मस्तानी आंखें बोलती हैं, जुबान नहीं। कहा भी है-

"Love's tongue is in the eyes"

अर्थात् प्रेम की जिह्वा नेत्रों में होती है। भगवान् से प्रेम करने का सभी को अधिकार है। जो भी उनसे प्रेम करना चाहता है तो भगवान यह नहीं देखते कि यह दुराचारी है या सदाचारी है, उच्च वर्ण का है या नीच वर्ण का है, सेठ है या गरीब है, पुरुष है या स्त्री है, बल्कि वे उससे प्रेम करने के लिए सदा उत्सुक रहते हैं। क्योंकि उन्हें प्रेम केवल प्रेम ही प्रिय है। प्रेम न क्षणिक होता है और न अधीर। प्रेम, तो जन्म-जन्मातर की साधना है। तभी तो रुक्मिणी जी पत्र में भगवान को लिखती है-

" हे केशव! मैं वरूँगी तो आपको ही। किसी कारणवश अथवा मेरे किसी दोषवश आप मुझे इस जन्म में नहीं अपना सके तो भी कोई बात नहीं। दूसरे जन्म में, तीसरे जन्म में अथवा जितने जन्म लेने पड़ें, मैं प्रतीक्षा करूंगी, लेकिन वरूँगी तो आपको ही। हे कमलनयन! यदि मैं आपकी चरण-धूल रूपी प्रसाद प्राप्त नहीं कर सकी तो व्रत द्वारा इस शरीर को सुखाकर प्राण छोड़ दूंगी। चाहे उसके लिए मुझे सैंकड़ों जन्म क्यों न लेने पड़ें, कभी न कभी तो आपका वह प्रसाद अवश्य ही मिलेगा।"

यह है प्रेम का विशुद्ध रूप जहां अधीरता नहीं, धैर्य है। विचलन नहीं, दृढ़ता है। शर्त नहीं, समर्पण है और आशा नहीं, पूर्ण विश्वास है। ऐसे प्रेम के ताप में तो स्वयं जनार्दन भी अनेकों बार तपे हैं, तप रहे हैं और तपेंगे।

भगवान श्रीकृष्ण के चरणों में जो एक बार सच्चे मन से प्रणाम करता है, उसकी तुलना तो फिर भी दस अश्वमेघों से की जा सकती है, परन्तु प्रभु-विरह में जिनकी आंखों से प्रेमाश्रु एक बार भी बह जाते हैं, उनके एक अश्रु बिन्दु की तुलना किसी से भी नहीं हो सकती। अभिप्राय यह है कि प्रभु को पाने के लिए जिनके हृदय में भगवत्प्रेम विरह की अग्नि धधकती रहती है, वह दिन-रात रोता रहता है। उसे खाना-पीना तक नहीं सुहाता। उसे नींद भी नहीं आती, नींद उड़ जाती है। बस प्रभु-प्रेम में निरन्तर रोना, आंसू बहाना ही उसका सर्वोपरि आनन्द होता है। मीरा, गोपियां, शबरी, धन्ना आदि ऐसे ही प्रेमी भक्त हुए हैं, जिन्हें भगवत्प्राप्ति हुई भी है। परमात्मा प्रेमाधीन है। इसलिए कहा है-

"सबसे ऊँची प्रेम सगाई"

नन्दबाबा जब कन्हैया को मथुरा पहुँचाकर ब्रज में वापिस आये, तब यशोदा मैया ने नेत्रों से अश्रुपात करते हुए पूछा कि आप जीवित ही आ गये (यानी कन्हैया को छोड़ते समय आपके प्राण नहीं निकले?) आप कैसे पिता हैं कि कन्हैया जैसे दिव्य पुत्र को प्राप्त कर, उनके बिना अभी तक आप जीवित खड़े हैं?

नन्दबाबा यशोदा के ऐसे शब्दों को सुनकर अधीर होकर बोले- यशोदे! तुम सत्य कहती हो। कन्हैया के बिना तो मुझे यहां जीवित आना ही नहीं चाहिए था। परन्तु तुमने यह सोच कैसे लिया कि कन्हैया के प्रति मेरा प्रेम एक दिखावा है। नहीं, नहीं, यशोदे! मेरा विश्वास करो, कान्हा के बिना मेरे प्राण छटपटाने लगे थे। मेरे प्राण निकलने ही वाले थे कि इतने में कन्हैया मेरी गोद में आकर बैठ गया और कहने लगा- "बाबा! बाबा! मैं फिर ब्रज आऊंगो। मेरे लिये माखन-मिसरी के लोंदे तैयार

रखियो।'' तब मैंने सोचा- कन्हैया कह रहा है- **'मैं फिर ब्रज आऊँगो''**। यदि वह कभी ब्रज में आया और उसने यह सुना कि बाबा संसार छोड़कर चले गये हैं तो उसको कितना दुख होगा। अतः हे यशोदे! मेरे लाला को जरा सा भी दुख न हो, मुझे चाहे जीवनभर क्यों न रोना पड़े, इसलिए मैंने अपने प्राणों को जाने नहीं दिया। अब तो बस इसी आस पर जीवित हूं कि एक दिन कान्हा अवश्य आयेगा। फिर से हमारे हाथ से माखन-मिसरी खायेगा। कहते-कहते नन्द बाबा सिसकियां भरने लगे व मूर्छित हो गये। यशोदा मैया ने नन्द जी को संभाला व दोनों ही कृष्ण-प्रेम में डूब गये।

अस्तु, सच्चा प्रेम केवल भगवान से ही करना है। यही जीवन का सार है। भगवान से ऐसा निश्चल प्रेम ही मांगें, बस और कुछ नहीं। ऐसे प्रेम को बढ़ाना प्रारम्भ करें- सभी के अन्दर भगवान का स्वरूप देखकर प्रणाम करें। सभी से मीठा बोलें, किसी से क्रोध न करें। किसी का मन न दुखायें। अधिक समय आध्यात्मिक स्वाध्याय में बितायें, दान-पुण्यादि कर्म करें, प्रभु-सुमिरन करें, गीता-पाठ में लग जायें- तभी ''भगवत्प्रेम'' की ज्योति हृदय में प्रज्ज्वलित होगी और प्रभु-प्राप्ति सुलभ होगी। **''भजत प्रीतिपूर्वकम्''**

गीता वेद-विरुद्ध नहीं

राधाकृष्ण शास्त्री, मथुरा

'त्रैगुण्य विषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन! सगुण ब्रह्म का निर्गुण ब्रह्म की ओर संकेत है। ब्रह्म निराकार और साकार भी है। वेद अनादि हैं। गीता के श्लोक से भासित हो रहा है कि अर्जुन! वेद त्रिगुण हैं, अतः तू त्रिगुण से रहित हो जा। वेद का खंडन जैसा प्रतीत हो रहा है, किंतु ऐसा नहीं है। वेद त्रिगुण के विषय हैं। विषय नहीं है। ब्रह्म में उदासीनता है अतः आसक्तिशून्यता है। आसक्ति से सुख-दुःख, मोह, राग द्वेष आदि आंधियां और व्याधियां होती हैं। इस आचार की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। यमदूत-संवाद में वेदो नारायणः साक्षात् स्वयंभूरिति शश्रुम ऐसा वर्णन है। वेद स्वयं प्रकट हैं। नारायण हैं। भागवत में वेदों ने स्तुति की है। अर्जुन त्रैगुण्य का विषय यदि बनता है, तो वह धर्मयुद्ध से विरत हो जायेगा। मोह एवं आसक्ति के बंधन में फंस जायेगा। अधिकार और कर्तव्य मुख्य होते हैं, 'मैथिली शरण गुप्त ने 'जयद्रथ वध' में लिखा है-

अधिकार खोकर बैठ रहना यह महा दुष्कर्म है।
न्यायार्थ अपने बंधु को भी दंड देना धर्म है।

इस तथ्य पर ही कौरवों का पांडवों से रण हुआ। जो भव्य भारतवर्ष के कल्पांत का कारण हुआ।

गीता का उपदेश केवल अर्जुन के लिये ही नहीं बल्कि समस्त विश्व के लिए ग्राह्य है। 12वें अध्याय में धर्म्यागृत शब्द का प्रयोग है। धर्म से युक्त अमृत का पान सभी को करना चाहिए। इस अमृतपान से जो वंचित रहना चाहता है उसको पाप लगता है।

गीता शास्त्र, वेद अनुगत है। वेद का ॐ गीता का बीज मंत्र है। **ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्** इत्यादि। इस मंत्र के उच्चारण से, स्मरण से कृष्णपद मिलता है।

उपदेशक श्रीकृष्ण स्वयं ब्रह्म हैं। निर्गुण एवं सगुण का प्रतिपादन लोक-शिक्षार्थ किया है। अर्जुन को लक्ष्य करके सभी गीतानुरागियों के लिये शिक्षण है। वेद को मानना चाहिए किंतु उक्त युद्धस्थल में निस्त्रैगुण्य गुणों में आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि भगवान ने उदासीनवदासीना कहा है। गुण गुणों में रहते हैं, यह समझकर उनके चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए। धर्मपूर्ण अमृत जो 12वें अध्याय में वर्णित है उस पर विवेक बुद्धि से विचार करना चाहिए।

श्रीमद्भागवत वक्ता

जैमल सिंह

वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन के घर भगवान शंकर जी के वरदान से शुकदेव जी का जन्म हुआ। उपनयन संस्कार के बाद इन्होंने विद्याध्ययन के लिये विद्यागुरु बृहस्पति जी से वेद, उपनिषद् आदि की शिक्षा ग्रहण की, जिसमें ब्रह्मसूत्र भी शामिल हैं। ज्ञान को क्रिया में बदलने के लिये उन्हें मिथलेश, राजा जनक जी के पास भेज दिया गया। उस समय उन्हें ब्रह्मज्ञान का अभिमान भी था। अत: यह मोक्ष में बाधक था। ज्यों ही मिथिलेश नगर में उतरे तो अज्ञान का नाश हो गया। राजमहल के सात द्वार पार करने थे। क्रमशः उन द्वारों को पार करते हुए (1) अहंकार (2) त्याग, (3) अनासक्ति योग (4) विरक्ति, (5) तितीक्षा, (6) सहनशीलता, (7) निष्कामता। अनन्य भक्ति के भावों में स्थिरता आ गई थी। इन भावों की दृढ़ता के बाद शुकदेव जी को परम वीतराग विदेहराज जनक जी के दर्शन प्राप्त हुए। उन्हें प्रणाम कर मोक्ष धर्म की जिज्ञासा जताई। राजा जनक जी ने श्री शुकदेव जी का स्वागत किया और बड़े ऊंचे आसन पर विराजमान किया एवं पूजा की और नीचे लिखा उपदेश किया-

1- वर्णाश्रम धर्म का पालन करो।

2- अपनी क्षमतानुसार मोक्ष मार्ग पर चलो।

3- परब्रह्म परमात्मा हर एक प्राणी के दिल में वास करता है उसका ध्यान धरो।

4- जिसको किसी से भय नहीं लगता समझ लेना चाहिए कि उसे ज्ञान की प्राप्ति हो गई है।

5- जिसका न कोई वैरी है, न मित्र है और कोई इच्छा भी नहीं है तो समझो ज्ञानी है।

गुरु जनक जी का उपदेश सुनते-सुनते शुकदेव जी का मन तदाकार हो गया और उन्होंने अपने गुरुदेव जनकजी को प्रणाम किया और वापिस अपने पिता वेदव्यास जी के पास पहुंचे। शुकदेव जी के मुखमण्डल को देखकर वेदव्यास जी समझ गये कि मेरे बेटे पर गुरुकृपा हो गई है। श्री व्यास जी ने श्री नारदजी की आज्ञानुसार लिखे गये भागवत ग्रंथ का अध्यापन शुकदेव जी को करवाया जोकि उन्हें कण्ठस्थ हो गया। श्रीमद्भागवत की कथाएं पढ़ते-पढ़ते शुकदेव जी तदाकार हो जाते थे। वह हर समय श्रीकृष्णलीलाओं का गान करते रहते एवं लीन हो जाते। एक दिन शुकदेव जी ने वैरागी होकर भगवान श्रीकृष्ण को ढूंढने की इच्छा से माता-पिता से आज्ञा लेकर गृहत्याग कर दिया।

राजा परीक्षित ने शृंगी ऋषि के पुत्र का शाप मिलने पर राजपाट का कार्यभार अपने पुत्र जन्मेजय को सौंपा और गंगातट पर देहावसान के लिए आ गये। वहां पर अनेक ऋषि मुनि एकत्रित हुए और आध्यात्मिक उपदेश करने लगे, पर राजा परीक्षित की श्रीकृष्णचरित्र सुनने की इच्छा को कोई भी पूर्ण नहीं कर सका। इतने में शुकदेव जी का आगमन हुआ। जो आत्मानंद में झूम रहे थे! सभी ऋषियों ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। बुद्धि के स्वामी शुकदेव जी व्यासपीठ पर विराजमान कराये गये और राजा परीक्षित ने उन्हें प्रणाम करके सारा हाल विदित कराया और अपने को धन्य मानते हुए प्रार्थना की कि मेरा मृत्युकाल निकट है और मुझे अब क्या करना चाहिए। कृपया दृष्टि डालें। तब श्री शुकदेव जी ने बताया- 'मनुष्य जीवन का लक्ष्य मोक्षप्राप्ति है। परमात्मा की लीलाओं-कथाओं का श्रवण, मनन तथा चिन्तन करना मोक्ष प्राप्ति का साधन है। फिर सम्पूर्ण भागवत सात दिन में अनवरत कहते हुए सुनाई जिसमें दशावतारों की कथा, सृष्टि का वर्णन, श्रीकृष्ण का चरित्र, परलोक गमन आदि था। सम्पूर्ण भागवत को सुनकर राजा परीक्षित पूरी तरह संदेहमुक्त हो जाते हैं एवं ब्रह्मनिष्ठ हो जाते हैं और सर्वत्र श्रीकृष्ण जी का दर्शन पाकर अभय हो जाते हैं और परमात्मा का ध्यान लगाकर परम पद को प्राप्त हो जाते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता क्यों पढ़ी जाये

(जीवन में गीताशास्त्र के पढ़ने से सुख, शांति की प्राप्ति एवं जीवन का आधार)

रमेशचन्द्र वर्मा

अधिकतर लोग यह सोचते हैं कि हमारा व्यक्तिगत जीवन एवं पारिवारिक जीवन सुखी एवं सम्पन्न हो तथा समाज में प्रतिष्ठा हो। बस फिर किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रह जाती। इन सभी को पाने के लिए केवल धन, सम्पत्ति की ही महत्ता समझी जाती है। अतः इनको पाने के लिए मनुष्य जीवन भर छल-कपट, भाग-दौड़ करता रहता है। धन से, यह सत्य है कि कुछ सीमा तक जरूरी वस्तुएं प्राप्त हो जाती हैं, किंतु यदि गहराई से विचार किया जाये तो ज्ञात होगा कि केवल धन होना ही आवश्यक नहीं है। हां, धन से भोजन मिल सकता है किंतु पाचन शक्ति नहीं। धन से दवाइयां प्राप्त हो सकती हैं, किंतु स्वास्थ्य नहीं। धन से मुलायम शैया मिल सकती है किंतु नींद नहीं। धन से मनोरंजन की वस्तुएं मिल सकती हैं किंतु आनंद नहीं। धन से नौकर-चाकर मिल सकते हैं, किंतु स्वामीनिष्ठ, सदैव हित चाहने वाले नौकर नहीं, आदि-आदि। किंतु जिन वस्तुओं का जीवन में सर्वाधिक महत्व है, वे हैं सुख, शांति और आनंद, ये वस्तुएं धन से नहीं खरीदी जा सकती हैं।

श्री वीरवर अर्जुन ने, भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज से, श्री गीता के मंत्र संख्या अध्याय (2/8) में इसी आशय से कहा है-

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद् यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणम्।

अवाप्य भूसावसपत्नमृद्धं राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम्।।

अर्थात् इस पृथ्वी में निष्कण्टक, धन-धान्य सम्पन्न राज्य को ओर देवताओं के भी आधिपत्य को पाकर भी मैं नहीं देखता हूं वह उपाय, जो मेरी इन्द्रियों के सुखाने वाले शोक को दूर कर सकें और सुख, शांति और आनंद प्राप्त हो सके।

यद्यपि इस संसार में एक से एक धनी व्यक्ति पाये जाते हैं किंतु वे सुख एवं शांति के लिए तरसते हैं। वहीं पर एक सामान्य व्यक्ति सुख एवं शांति से भरापूरा मिल सकता है, सुख की सामग्री चाहे धन से प्राप्त भी हो जाये, किंतु शांति एवं प्रसन्नता के अभाव में मनुष्य का जीवन उपहास करता प्रतीत होता है और मनुष्य असहाय एवं अंदर से रिक्तता महसूस करता है। किंतु यदि सुख, प्रसन्नता एवं शांति प्राप्त हो जाये तो फिर मनुष्य का जीना चाहे किसी भी सामाजिक स्तर का क्यों न हो उसे सुख, शांति का अनुभव अवश्य प्राप्त होगा। अतः यह निर्विवाद सत्य है कि जीवन में सुख प्राप्त करने के लिए मन की शांति नितांत आवश्यक है।

यद्यपि सभी वेद, पुराण, उपनिषद-शास्त्र इत्यादि मन की शांति पाने का उपाय बताते हैं, किंतु श्रीमद्भागवद्गीता, जो सभी शास्त्रों का निचोड़ है, जो परमाराध्य श्रीकृष्णचन्द्र जी भगवान के मुखारविंद से निकली हुई वाणी है, इसमें न केवल मन की शांति प्राप्त करने के उपाय मिलेंगे, बल्कि सांसारिक जीवन में अभ्युदय के लिए श्री गीता का ज्ञान अचूक साधन है।

अब प्रश्न उठता है कि गीता के किन-किन बिंदुओं पर विचार किया जाये। श्री गीता के प्रथम अध्याय का नाम ही 'श्री अर्जुन विषाद योग' है। इसका अर्थ है कि विषाद ही से ही जीवन का

प्रारम्भ होता है और इसको दूर करने का उपाय बताना ही गीता का मुख्य विषय है, क्योंकि बिना कारण के क्रिया नहीं होती है। हमारे परम-पूज्य प्रातःस्मरणीय श्री गुरुदेव महाराज (ब्रह्मलीन श्री श्री 1008 स्वामी हरिहर जी महाराज) जी इस अध्याय को समझने के लिए विशेष महत्व देते थे तथा निम्नलिखित (श्रीगीताजी के) बिंदुओं पर विशेष ध्यान देने को कहते थे-

1- श्री गीता जी के द्वादश अध्याय को गीता का हृदय ही कहते थे ताकि श्रद्धा और निष्काम अनन्य भक्ति का जीवन में भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज के प्रति अभ्युदय हो सके और उनकी कृपा से आत्मज्ञान की प्राप्ति हो सके। निष्काम कर्मयोग की भी खूब सराहना करते थे।

2- मानव का स्वरूप क्या है?- 'अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि, प्रज्ञानब्रह्म, अयमात्मा ब्रह्म और सोऽहम्।

3- परिस्थितियों से घिरे होने से उसका स्वरूप क्या है?- रस्सी (रज्जु) एक सर्वस्वरूप है।

4- विषाद का कारण क्या है?- भ्रम, शांति, संशय, अनिश्चितता।

5- विषाद को निर्मूल करने एवं सुख, शांति एवं आनंद प्राप्त करने का क्या उपाय है?- आत्म-ज्ञान।

उपरोक्त बिंदुओं को जानने, समझने एवं पालन करने के लिए श्री गीताशास्त्र में विस्तार से विवेचन किया गया है। संसार में लोगों की समझ के स्तर भिन्न-भिन्न प्रकार के होने के कारण हर स्तर की समझ के अनुसार श्री गीता शास्त्र को ग्रहण करने के लिए ज्ञान के विस्तार की आवश्यकता होती है। अतः श्री गीताशास्त्र को मनन करने से ही कल्याण होगा, जबकि इस शास्त्र को धैर्य, आस्था एवं विश्वास रखते हुए तत्परता से निरंतर अध्ययन किया जाये, जीवन के लिए उसकी उपयोगिता समझी जाये और जीवन में शनै शनै उतारी जाये।

श्री गीता के मंत्र संख्या (18/65) में भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज ने स्वयं कहा है-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

अर्थात् सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मों को, मुझमें त्याग कर तू केवल एक मुझ, सर्वशक्तिमान, सर्वाधार मेरी ही (परमेश्वर की ही) शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से (कर्म-बंधन से) मुक्त कर दूंगा, तू शोक मत कर।

आगे भगवान ने पूर्ण विश्वास के साथ मंत्र संख्या (18/70) में कहा है-

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः।।

अर्थात् जो व्यक्ति इस धर्ममय हम दोनों के संवाद रूप (भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज एवं श्री अर्जुन) श्री गीताशास्त्र को पढ़ेगा, उसके द्वारा भी मैं ज्ञान-यज्ञ (सम्पूर्ण कर्म-बंधन से मुक्ति) से पूजित होऊंगा।

भगवान ने अगले मंत्र संख्या (18/71) में और स्पष्टता से बात कही है-

श्रद्धावाननसूयश्च श्रृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभांल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।।

अर्थात् जो मनुष्य श्रद्धायुक्त और दोष-दृष्टि से रहित होकर इस श्री गीताशास्त्र को केवल सुनेगा, वह भी पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वालों के श्रेष्ठ लोकों को अर्थात् उत्तम लोकों में पुनर्जन्म को प्राप्त होगा।

अतः गीताशास्त्र के कुछ न कुछ श्लोकों (मंत्रों को) का नित्य पठन-पाठन अवश्य ही करना चाहिए। ईश्वरीय कृपा हम सभी को आध्यात्मिक सम्पदा से सम्पन्न करती रहे तथा हम स्वस्थ एवं निर्विघ्न जीवन व्यतीत करें।

श्री रामेश्वरम् एवं श्री बालाजी

श्रेयानन्द

हमारे धर्मशास्त्रों के अनुसार धर्म के चार चरण बताये गये हैं। सत्य, शुचिता, तप और दान। साथ ही यज्ञ, तप, दान का महत्व गीता में बारम्बार बताया गया है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में लिखा है-

ध्यान प्रथम जुग, मख जुग दूजे।
द्वापर परितोषित प्रभु पूजे।।
कलियुग केवल नाम अधारा।

अर्थात् सतयुग में ध्यान, त्रेतायुग में यज्ञ, द्वापर में श्रीहरि विग्रह-पूजन और कलियुग में एकमात्र हरिकीर्तन साधन है। गोस्वामी जी ने यह भी कहा कि 'एन केन विधि दीन्हे दान परम कल्याण।' अर्थात् कलियुग में कैसे भी दान किया जाये, कल्याणकारक हैं। इस्लाम ने भी सनातन परम्परा के अनुसार ही धर्म के चार साधन बताये हैं-- नमाज, रोजा, खैरात व जियारत। नमाज नाम स्मरण, रोजा तप, खैरात दान तथा जियारत तीर्थयात्रा है।

हमारे यहां चारों धामों की यात्रा, द्वादशलिंग दर्शन मुक्ति के साधन माने गये हैं। आदि शंकराचार्य जी ने हमारे चारों धामों को देश की चारों सीमाओं पर स्थापित करके और तीर्थराज देश के केन्द्रबिन्दु प्रयाग में मानकर सम्पूर्ण राष्ट्र को धर्म-संस्कृति के आधार से एकता के सूत्र में बांधा। उत्तर में श्रीबद्रिकाश्रम में भगवान श्रीनारायण लक्ष्मी से दूर बैठकर तप में रत सतयुग की लीला कर रहे हैं। दक्षिण में रामेश्वरम् में पराक्रमी भगवान श्रीराम ने सेतु बांधा और राक्षसों का विनाश करके धर्म की प्रतिष्ठा व भगवान शिव की प्राण-प्रतिष्ठा की। यह त्रेता की लीला है। यही यज्ञ है। द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण देश की पश्चिमी सीमा द्वारिकापुरी में पूर्ण वैभवयुक्त हैं और उनकी पूजा होती है। पूर्व में श्री जगन्नाथपुरी में समुद्र तट पर भगवान श्रीकृष्ण भाई बलभद्र व बहन सुभद्रा के साथ भोजन लीला में निमग्न हैं और उनका नाम जगत उद्धार करता है, चारों धामों की यात्रा क्रम में तीन धामों की यात्रा के उपरांत मैंने गीता परिवार के कुछ सदस्यों के साथ श्री रामेश्वरम में श्री रामनाथम भगवान शिव शंकर के दर्शन करने हेतु मार्गशीर्ष माह वि.स. 2064 में यात्रा की। यहां समुद्र पूर्ण शांत है, भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने सागर को भी मर्यादा में बांध दिया है। घंटों तैरते रहने पर जीवन को कोई संकट नहीं दिखाई दिया। रामायण में रामराज का उल्लेख है।

सागर निज मर्यादा रहहीं।
डारइं रत्न तटन नर लहहीं।।

सबसे बड़ा रत्न तो भगवद्भक्ति है। भगवान शिव, भगवान श्रीराम के स्वामी, सेवक व सखा हैं।

सेवक स्वामि सखा सिय पियके।
हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के।।
बिनु छल विश्वनाथ पदनेहू।
राम भगत कर लच्छन एहू।।

भगवान श्रीराम ने लंका विजय हेतु पहले समुद्र में सेतु बांधा। धनुषकोटि स्थान पर सेतु समुद्रम् के अवशेष आज भी विद्यमान हैं। यह प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। क्षुद्र राजनीतिज्ञ इसे नकार नहीं सकते। भगवान श्रीराम देश, काल, परिस्थिति से परे हैं। सेतु-स्थापन के बाद भगवान श्रीराम ने उद्गार प्रकट किए।

परम रम्य उत्तम यह धरनी।
महिमा अमित जाइ नहिं बरनी।।
करिहउं इहां संभु थापना।
मोरे हृदय परम कल्पना।।

भगवान श्रीराम ने कहा कि भगवान शिव उनके परम प्रिय हैं। दोनों में समान श्रद्धा होनी चाहिए।

संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कल्प भरि घोर नरक महं बास।।

जे रामेश्वर दर्शन करिहहिं। ते तनु तजि मम लाक सिधरिहंहि।।

जो गंगाजल आनि चढ़ाइहि। सो सायुज्य मुक्ति नर पाइहि।।

होइ अकाम जो छल तजि सेइहि। भगति मोरि तेहि संकट देइहि।।

मम कृत सेतु जो दरसनु करिही। सो बिनु श्रम भवसागर तरिही।।

अतः सनातन संस्कृति व परम्परा की धरोहर की हमें रक्षा करना है। दक्षिण भारत में मदुरै में माता मीनाक्षी का मंदिर स्थित है। यह माता पार्वती का ही एक रूप है। भारत की दक्षिण सीमा कन्याकुमारी स्थान पर कन्या पार्वती ने घोर तप करके भगवान शिव को प्राप्त किया। यहां का सूर्योदय दृश्य अत्यंत रमणीक व लुभावना है। जैसे गंगासागर का सूर्यास्त। एक सूर्य आकाश में दिखाई देता है, तो दूसरा सूर्य सागर में। सागर में पृथ्वी तट से कुछ दूरी पर तमिल धार्मिक कवि थिरवल्लुर की विशालकाय प्रतिमा एक शिला पर स्थापित है, तो दूसरी शिला विवेकानन्द शिला पर महान संत स्वामी विवेकानन्द जी की प्रतिमा स्थापित है। कहते हैं कि स्वामीजी ने यह समुद्र की दूरी तैरकर पार की थी। वर्ष 1892 में वह वहां 26-27-28 दिसम्बर में तीन दिन ध्यानमग्न रहे थे। आज इन दोनों शिलाओं की यात्रा जहाज द्वारा होती है।

यहां की चर्च का नाम भी माता देवालय है। दक्षिण भारत में तिरुमाला, तिरुपति स्थान पहाड़ी पर भगवान श्री गोवर्धन नाथ बालाजी विराजमान हैं। यहां दर्शन करने में घंटों नहीं अपितु दिनों में प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

भगवान गोवर्धन नाथ- व्रज में कंगाल हैं। केवल भक्तों के लिए हैं। भक्ति प्रदान करते हैं। वहीं नाथद्वारा में उनका विग्रह रूप श्रीनाथ जी, असीम श्रीलक्ष्मी से युक्त है। तो द्वारिकापुरी में द्वारिकाधीश धन वैभव ऐश्वर्य से युक्त हैं। दक्षिण में तिरुमाला शिखर पर तो भगवान असीम धन से युक्त हैं। क्योंकि वहां भक्त सकाम भाव से अधिक आते हैं। वहां पापविनाशिनी गंगा व आकाश गंगा की धारा आश्चर्यचकित करने वाली है।

दक्षिण भारत में सभी मंदिरों में गर्भगृह में बिजली की रोशनी न होकर घृत ज्योति जलती है और प्रतिमा विग्रह काले पाषाण की है। ताकि वहां के निवासियों के साथ एकरंग में दिखाई दे।

सम्पादकीय

एक निवेदन

गीता-परिवार के समस्त सदस्यों को सादर अवगत कराया जाता है कि श्री सद्गुरुदेव भगवान के 109वें जन्म-महोत्सव मार्च 2008 के सुअवसर पर 'गुरु प्रसाद' विशेषांक ''देश-विदेश में गीता आश्रम व गीता धाम का योगदान'' प्रकाशित किया जाएगा।

अपने-अपने आश्रमों में स्थापित भगवान के चित्र, आश्रम का विवरण, अन्य रचनायें कृपया अपने लेख, कविताओं एवं चित्रों सहित, एवं सुझाव, प्रधान संपादक 'गुरु प्रसाद' मुख्यालय गीता-आश्रम दिल्ली छावनी-110010 को यथाशीघ्र भेजने की महती कृपा करें।

श्रेयानन्द

प्रधान सम्पादक- गुरु प्रसाद

गीता आश्रम, दिल्ली कैण्ट-110010

गुरुमाँ जी की Miami, Lima और Panama यात्रा

पूज्य गुरुमां जी दिनांक 25 दिसंबर को Miami में बहन बीना नंदवानी जी के निवास स्थान पर पधारीं। दो दिन Miami में सम्पूर्ण गीता यज्ञ हुए। दिनांक 28 दिसंबर को गुरुमां जी पेरु की राजधानी Lima में आईं, जहां पर भक्तों ने उनका भव्य स्वागत किया। गुरु मां जी का आवास लीमा में बहन लता मुरारी के निवास स्थान पर था। दिनांक 28 दिसंबर को गीता-यज्ञ बहन गीता और गिरीश छुगानी के निवासस्थान पर था। शाम का यज्ञ सत्संग भाई हरीश और मनिषा के यहां था। दिनांक 30 दिसंबर रविवार को यज्ञ और विशाल सत्संग गीता आश्रम प्रांगण में किया गया। जहां पर बड़ी संख्या में भक्तों ने सत्संग लाभ लिया। पण्डित रविन्द्र उपाध्याय बड़ी श्रद्धा-निष्ठा से कार्य कर रहे हैं।

दिनांक 31 को बहन निर्मला के घर सत्संग हुआ और रात का सत्संग भाई मोहन और रोमीना के घर पर रखा गया। रात को 11.25 बजे वसुदेवसुतम् देवम् मंत्र की पूरी माला का जप करके, द्वादश अध्याय का पाठ किया गया। पूरे बारह बजे भगवान की आरती, गुरु वंदना की शंख-ध्वनि से नये वर्ष का स्वागत किया गया। भगवान् श्री कृष्णचंद्र की, गुरुदेव भगवान त्नी, गीता माता की जय-जयकार से पूरा वातावरण गूंज उठा। गुरुमां जी ने सबको गुरुदेव भगवान् का आशीर्वाद दिया। दिनांक 1 जनवरी प्रातः काल पुनः बहन राधा मोहन के घर पर गीतापाठ, सत्संग हुआ, तदुपरांत बहन लता जी, लक्ष्मन और हसीन के यहां गीता यज्ञ किया। दोपहर में बहन सुनीता के घर पर गीता यज्ञ हुआ और शाम का सत्संग बहन लक्ष्मी के निवासस्थान पर हुआ। दिनांक 2 जनवरी को प्रातः यज्ञ भाई केनी के घर पर किया गया। शाम को भाई रोहित की दवाईयों की फैक्ट्री पर गीतापाठ किया। रात का सत्संग बहन रेखा और धर्मेश के घर पर किया जहां पर बहुत बड़ी संख्या में भक्त लोग आए थे। तदुपरांत भाई किशोर गुप्ता के घर पर पाठ हुआ। दिनांक 3 को गुरु मां जी ने पनामा के लिये प्रस्थान किया। गुरु मां जी पनामा में बहन गीता भगवान दादलानी के निवासस्थान पर पधारीं। दिनांक 4 को गीता जी के घर पर गीता यज्ञ और सत्संग किया गया। दिनांक 5 जनवरी को बहन कोमल अशोक के घर पर गीता पाठ, सत्संग हुआ। रात को हिन्दू मंदिर में गुरु मां जी का प्रवचन हुआ, जिसमें गुरु मां जी ने वाणी का तप बताया। दिनांक 6 को Colon में साधु वासवानी सेंटर में भव्य सत्संग हुआ। दिनांक 7 को बहन मीना भतेजा के निवासस्थान पर और भगवान् राधा कृष्ण मंदिर में सत्संग हुआ।

दिनांक 8 को ईशू मोहीशा आनंदानी के घर पर सत्संग हुआ। शाम का सत्संग बहन सोनी बुधरानी के घर पर हुआ। दोनों जगह भक्तों की भीड़ लगी रही।

दिनांक 8 को बहन रोशनी और सविता माधवी के घरों पर सत्संग हुए। सांई बाबा सेंटर में तत्पश्चात् सत्संग हुआ। दिनांक 10 को प्रातः बहन रितिका के यहां यज्ञ हुआ। दिनांक 10 को बहन सती मयानी के घर पर सत्संग हुआ। रात को बहन विष्णु एवं प्रिया के यहां यज्ञ और सत्संग हुआ। भाई सामतानी जी ने हर सत्संग में अपने अनमोल वचन सुनाए। दिनांक 11 को बहन अंजू, बहन करिश्मा और बहन सुनयना के यहां गीतायज्ञ किये गये और उसी शाम को पनामा में बहन मीरा सावरानी के घर पर विशाल सत्संग का आयोजन हुआ। भक्तों ने गद्‌गद मन से गुरु मां का स्वागत किया और अंत में धन्यवाद किया। दिनांक 13 को गुरु मां ने दिल्ली के लिये प्रस्थान किया।

आश्रम समाचार

गीता आश्रम मुख्यालय, दिल्ली कैंट

परम पूज्य सद्गुरुदेव भगवान की अनुकम्पा से दिन प्रतिदिन आश्रम का कार्य प्रगति पर चल रहा है। प्रातः काल 5 बजे आरती एवं तीन अध्याय गीता का पाठ, हनुमान चालीसा एवं एक अध्याय से हवन किया जाता है। स्वामी ब्रह्मानन्द जी एवं स्वामी श्रेयानन्द जी द्वारा माघ मेले में दिनांक 6 जनवरी से श्री गीता आश्रम का शिविर लगाकर सत्संग, भजन, कीर्तन, प्रवचन एवं हवन का कार्यक्रम चल रहा है।

यज्ञ- बहन सुमन गुलशन कालरा के निवास स्थान पर परम पूज्यनीय गुरु मां जी एवं पंडित विवेकानन्द उपाध्याय जी ने श्री गीता जी के 3,5, 12, 15, 18 अध्याय का यज्ञ किया। दिनांक 13 जनवरी को गुरु मां जी लीमा मयामी और पनामा की यात्रा करके दिल्ली को वापस लौटीं।

मलेशिया से डॉ. दानेश, बहन दामिनी जी की सुपुत्री माया एवं सौरभ के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में गीता यज्ञ किया गया। दिनांक 18 जनवरी को श्रीमद्भगवद्गीता वर-वधू को भेंट करके गुरु मां जी एवं श्री गोपी कृष्ण वातल जी ने उनको गुरुदेव भगवान का आशीर्वाद दिया। दिनांक 19 जनवरी को गीता धाम के ट्रस्टी स्वर्गीय श्री गंगवानी जी के पौत्र एवं बहन किरण, दीपक, श्री नानी जी के भतीजे शिवानन्द एवं आंचल के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में पूज्य गुरु मां जी एवं श्री गोपी कृष्ण वातल जी ने श्रीमद्भगवद्गीता एवं अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट करके गुरुदेव भगवान का आशीर्वाद दिया। दिनांक 20 से पूना की यात्रा करके गुरु मां जी 25 जनवरी को दिल्ली वापस लौटीं। दिनांक 28 जनवरी को परम श्रद्धेया गुरु मां जी ने बैंकाक के लिये प्रस्थान किया।

गीताधाम समाचार

अन्नकूट महोत्सव- दिनांक 24-11-2007 वार शनिवार पूर्णिमा को श्री राधाकृष्ण सरोवर मन्दिर में अन्नकूट का विशद कार्यक्रम किया गया। भगवान को भोग अर्पित करने हेतु 56 प्रकार से भी अधिक व्यंजनों से निर्माण किया गया। इस कार्य में डॉ. पी.पी. व्यास व श्रीमती सरस्वती व्यास विशेष रूप से बधाई के पात्र हैं। जिन्होंने भगवान के भोग- निर्माणार्थ सभी व्यंजनों के निर्माण में अथक परिश्रम किया। इसी दिन बस द्वारा जोधपुर से लगभग दो सौ दर्शनार्थी भक्तजन इस कार्यक्रम में भाग लेने हेतु पधारे, जिन्होंने अन्नकूट-दर्शन-लाभ किया। मध्यान्ह शुभ नक्षत्र में भगवान की युगल जोड़ी को भोग अर्पित किया गया। तत्पश्चात प्रशासक गीताधाम श्री प्रकाश पुरोहित, डॉ. पी.पी. व्यास, डॉ. केशवराज जोशी व जोधपुर से पधारे कई भक्तजनों द्वारा भजन प्रस्तुत किये गये। जोधपुर गीता-भक्तों द्वारा अनवरत ग्यारह वर्षों से चल रहे नियमित यज्ञ की कड़ी के अन्तर्गत गीता के द्वादश अध्याय द्वारा यज्ञ किया गया। अन्त में स्वामी आत्मानंद जी व स्वामी श्रेयानन्द जी महाराज के प्रवचन हुए। स्वामी श्रेयानन्द जी महाराज द्वारा अन्नकूट पर विस्तृत प्रवचन किया गया, जिसका लाभ सभी भक्तजनों ने प्राप्त किया।

हनुमानजी को 1008 लड्डुओं का भोग- दिनांक 24-11-2007 को ही सायंकाल 5.30 बजे मंगलमूर्ति हनुमान जी मंदिर में हनुमान जी को 1008 लड्डुओं का भोग अर्पित किया गया। गुरुकुल के सभी छात्र व शिक्षकों के अतिरिक्त गीताधाम प्रशासन के सभी सदस्य तथा अन्नकूट दर्शनार्थ पधारे जोधपुर के सभी भक्तों ने इस पुनीत कार्य में हिस्सा लिया। आरती, जयघोष के पश्चात सभी भक्तजनों को प्रसाद-वितरण करते हुए कार्यक्रम का समापन किया गया।

गीता जयंती का वर्ष 2007 का कार्यक्रम प्रारम्भ- दिनांक 3-12-2007 से गीता जयंती महोत्सव का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ जिसमें नित्य गुरुकुल छात्र, प्रधानाचार्य, अध्यापक एवं सभी भक्तजन प्रभात फेरी कार्यक्रम में घंटा बजाते हुए, शंखनाद करते हुए

तथा द्वादश अध्याय के पाठ के साथ राधाकृष्ण मंदिर में प्रातः पहुंचते थे, जहा पर पुनः द्वादश अध्याय का सामूहिक पाठ करके, भक्तजनों द्वारा भजन कीर्तन के पश्चात स्वामी आत्मानंद जी व स्वामी श्रेयानन्द जी महाराज द्वारा द्वादश अध्याय के एक मंत्र की नित्य व्याख्या की जाती थी। इसके अतिरिक्त निर्देशानुसार गुरुकुल के शिक्षकों व प्रधानाचार्य श्री अशोक विद्यार्थी जी द्वारा द्वादश अध्याय के एक मंत्र की व्याख्या की जाती थी। गीता जयंती महोत्सव के अन्तर्गत सम्पूर्ण दिनों किसी न किसी भक्त के यहां नियमित रूप से गीता के सम्पूर्ण श्लोकों से यज्ञ कार्य संचालित होता था। गीताधाम से स्वामीजन, प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित, विद्यालय प्रबन्धक श्री पी.एन. बोहरा, डॉ. पी.सी. व्यास, श्री विश्वनाथ पाडे व श्री राकेश कुमार शुक्ल नियमित रूप से गीता भक्तों के यहां पहुंचकर यज्ञ कार्य में भाग लेते थे। प्रत्येक जगह यज्ञ कार्य का संचालन व गीता श्लोकों का सस्वर पाठ श्री विश्वनाथ पाडेय ने किया। प्रत्येक जगह स्वामी जनों के प्रवचन के बाद गीता ध ाम प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित द्वारा गीताधाम की क्रियाविधि के बारे में भक्तजनों को जानकारियां दी जाती थीं तथा प्रत्येक भक्त परिवार को 'गीताधाम आपका है, गीताधाम के कार्यक्रमों में भाग लें' कहकर आहूत व आमंत्रित किया जाता था।

मासिक निःशुल्क बस व्यवस्था- हर माह की भांति इस माह भी द्वितीय रविवार दिनांक 9-12-2007 को जोधपुर शहर से गीताधाम तक आने व जाने के लिए की गई निःशुल्क बस व्यवस्था का लाभ करीब 70 लोगों ने लिया। दर्शनार्थियों ने श्री राधाकृष्ण मंदिर में गीताजी का लघु यज्ञ किया तथा भजन-कीर्तन के पश्चात प्रसादी के रूप में भोजन प्राप्त करके जोधपुर के लिए सायं 4 बजे प्रस्थान किया।

पूजनीया गुरु मां का गीताधाम में प्रवास- दिनांक 10-12-2007 दिन सोमवार को श्री गुरु मां गीतेश्वरी जी अति व्यस्त कार्यक्रम में से समय निकालकर गीताधाम में आयोजित गीता जयंती महोत्सव कार्यक्रम में भाग लेने गीताधाम पहुंचीं एवं तीन दिन गीताधाम में वास किया। अल्पकालीन प्रवास में उन्होंने अनेक कार्यक्रमों में भाग लिया। प्रातःकालीन पूजा अर्चना में भाग लेते हुए उन्होंने तीन दिनों में अलग-अलग द्वादश अध्याय के श्लोकों की व्याख्या की और साथ ही गीता के माध्यम से अपने जीवन को किस प्रकार कष्टरहित एवं सरल बनाया जा सकता है इस बात की जानकारी उन्होंने गुरुकुल के छात्रों को दी।

दिनांक 11-12-2007 को गीताधाम के स्थानीय ट्रस्टियों के साथ बैठकर भावी कार्यक्रमों के संबंधों में विचार-विमर्श किया। दिनांक 12-12-2007 को प्रातःकाल छात्रावास में छात्रों की सुविधा हेतु पलंगों का वितरण गुरु मां के कर-कमलों द्वारा किया गया। इस अवसर पर वैदिक मंत्रोच्चार एवं द्वादश अध्याय का पाठ उपस्थित गीताभक्त एवं गुरुकुल के छात्रों द्वारा स्वामी श्रेयानन्द जी महाराज के सान्निध्य में सम्पन्न किया गया। इस अवसर पर गीताधाम प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित, डॉ. पी.पी. व्यास, श्री पी.एन. बोहरा, गुरुकुल प्रध ानाचार्य एवं अध्यापकगण उपस्थित रहे। दिनांक 12-12-2007 को सायं 5 बजे गुरु मां जी ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया।

गीता जयंती महोत्सव का समापन- गीता जयंती महोत्सव कार्यक्रम पूरे 18 दिनों तक चलने के बाद दिनांक 20-12-2007 मोक्षदा एकादशी को गीताधाम के राधाकृष्ण सरोवर मंदिर में सम्पूर्ण गीता यज्ञ का आयोजन किया गया। जोधपुर व आस-पास से काफी अधिक संख्या में भक्तजनों ने पधारकर यज्ञ कार्यक्रम में भाग लिया। भजन-कीर्तन व स्वामी आत्मानंद जी महाराज के प्रवचन के पश्चात गीताधाम प्रशासक व सभी भक्त जनों द्वारा गुरुचरण-पादुका का पूजन किया गया। इस यज्ञीय कार्य में डॉ. केशवराज जी जोशी व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुंदर कौर जी ने मुख्य यजमान की भूमिका निभायी। गीताधाम प्रशासक श्री प्रकाश जी पुरोहित ने पधारे हुए सभी भक्तजनों के प्रति आभार प्रकट किया। अन्त में जयघोष व प्रसाद वितरण के पश्चात कार्यक्रम का समापन किया गया। सायंकाल जोधपुर स्थित सिंघोड़ियों की बारी (किला रोड स्थित)

गीता आश्रम में सम्पूर्ण गीतायज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें गीताधाम के प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित, डॉ. पी.सी. व्यास सपत्नीक, डॉ. केशवराज जी जोशी ने सपत्नीक आहुतियां दीं एवं प्रसाद प्राप्त किया।

गीता आश्रम फरीदाबाद

परम पूज्य गुरुदेव भगवान की अपार कृपा से यहां का कार्य दिनोंदिन प्रगति पर है। प्रत्येक रविवार को प्रातः 8.00 से 10.00 बजे क्रमानुसार गीता जी का हवन व सत्संग होता है। यह क्रम लगभग गत 40 वर्षों से चल रहा है। प्रत्येक मंगलवार और शनिवार को हनुमान चालीसा के 108 पाठ तुलसीदल के साथ किये जाते हैं। गीता-आश्रम नं. 2 में नित्यप्रति सांय 4.00 से 5.00 बजे तक गीता-पाठ व भजन-कीर्तन होते हैं। शनिवार को हनुमान चालीसा के 108 पाठ किये जाते हैं व रविवार सांय 5.00 से 8.00 बजे तक सत्संग-प्रवचन होते हैं।

फरीदाबाद के अलावा पलवल में भी गीता-जयन्ती महोत्सव दिनांक 24.12.07 को धूमधाम से मनाया गया। पूज्य स्वामी मुक्तानन्द जी व स्वामी गीता मातेश्वरी जी द्वारा गीता-यज्ञ करवाया गया व भजन-कीर्तन के बाद गीता-जयन्ती पर प्रकाश डाला गया। तत्पश्चात् भण्डारा वितरण किया गया। सभी भक्तों ने आनन्द अनुभव किया।

वैद्यनाथ की यात्रा किसी कारणवश स्थगित की गयी। (18.1.08) इस दौरान स्वामी जी 2-3 दिन के लिए पानीपत पधारे और वहां पर गीता-पाठ व सत्संग किया। दिनांक 10.1.08 को महरौली में उन्हें एक शोकसभा में बुलाया गया, जहां उन्होंने गीता-ज्ञान देते हुए शोकाकुल परिवार को सांत्वना दी।

दिनांक 13.1.08 रविवार को लोहड़ी व मकर-संक्रान्ति के उपलक्ष में दोनों आश्रमों में धूमधाम से सत्संग किया गया व लोहड़ी भी जलायी गयी। मातेश्वरी गीता जी ने लोहड़ी क्यों मनायी जाती है, इस पर प्रकाश डाला। दिनांक 14.1.08 को फरीदाबाद में तीन भक्तों के घर व फैक्टरी में गीता जी के हवन किये गये। दिनांक 15 व 16 जनवरी को गुड़गांव में मिंया वाली कालोनी में दो जगह गीता जी का सम्पूर्ण यज्ञ सम्पन्न हुआ।

पूज्य स्वामी जी व गीता जी ने 21.1.08 चण्डीगढ़ होते हुए 24.1.08 को नंगल व हिमाचल के लिए प्रस्थान किया। ऊना (हिमाचल) के पास खन्नी गांव में 27.1.08 से 3.2.08 तक गीता-सप्ताह का आयोजन है। गत वर्ष भी यहां पर गीता-सप्ताह हुआ था, जिसमें लगभग 18 से भी अधिक गांवों से भक्तजन आकर गीता-सत्संग में भाग लेते थे।

दिनांक 10.2.08 को पूज्य स्वामी मुक्तानन्द जी का सन्यास-दिवस दोनों आश्रमों में धूमधाम से मनाया जायेगा। दिनांक 17.2.08 से 26.2.08 तक 22-सी, चण्डीगढ़ के श्री सत्यनारायण मन्दिर में गीता-सप्ताह का प्रोग्राम बुक है। इस बीच 24.2.08 को वहां "श्रीकृष्णार्जुन संवाद" का भव्य कार्यक्रम रहेगा, जिसके लिए सभी भक्तों के लिए निमन्त्रण है। वहां आकर इस आयोजन में भाग ले सकते हैं। यह कार्यक्रम दर्शनीय होगा। आश्रम में मन्दिरों के शिखर बनकर तैयार हो गये हैं। अब श्रीराधा-कृष्ण मन्दिर के शिखर का निर्माण कार्य चल रहा है। गीता -माता के मन्दिर का नक्शा भी तैयार हो चुका है। शीघ्र ही मन्दिर निर्माण-कार्य प्रारंभ होगा। प्रतिमा जयपुर में बन रही है। आगे के कार्यक्रम अगले अंक में।

गीता आश्रम मुम्बई

परम आराध्य 108 श्री स्वामी हरिहर महाराज की असीम अनुकम्पा व प्रेरणा से गीता आश्रम मुम्बई का सभी काम बहुत सुचारु व सुरूचिपूर्ण ढंग से फल-फूल रहा है। मुम्बई गीता आश्रम का संपूर्ण संचालन-भार श्रीमती स्वर्ण अमरनाथ अम्बो पर है और वे तन, मन, धन से इसकी प्रगति में लगी हुई हैं। प्रतिमास की तरह इस नवम्बर महीने के दूसरे व चौथे रविवार को क्रमशः सत्संग शमा सचदेवा व मीना महतानी के घरों में हुआ। सभी गीता भक्तों ने इसका आनन्द उठाया। हर महीने की तरह इस महीने भी पूरी गीता का पाठ इस बार श्रीमती विनोद चोपड़ा के घर हुआ। हर बुधवार को श्रीमती स्वर्ण अम्बो अपने घर गीता की कक्षाएं चलाती हैं। जिसमें वे पहले एक-एक श्लोक को पढ़ना सिखाती

हैं, फिर उसका अनुवाद, फिर उसके भाव से हम शिष्यों का मार्गदर्शन करने की कोशिश करती हैं। बहुत भक्त इसका लाभ उठा रहे हैं। श्रीमती अम्बो हर गुरुवार को भगवान को समर्पित करते हुए मौन व्रत का पालन करती हैं। गुरुदेव की कृपा से 2 दिसंबर से लेकर 20 दिसंबर तक गीता जयन्ती महोत्सव मुम्बई गीता आश्रम में अत्यन्त धूमधाम से मनाया गया। इसमें अनेक श्रद्धालुओं ने भाग लिया, कई नये भक्तों व कुछ बच्चों ने भी भाग लिया। 18 दिनों तक भक्तों ने बारी-बारी से अपने-अपने घरों में सत्संग और प्रसाद का आयोजन किया। श्रीमती अम्बोजी हर साल गीता जयंती में कुछ नयापन लाने का प्रयास करती हैं। इस बार जिस भक्त के घर पर पाठ था उस भक्त ने उस अध्याय के बारे में समझाया। फिर श्रीमती स्वर्ण अम्बो जी ने संक्षेप में मूल बातें बतायीं। उसके बाद अलका अम्बो ने हर अध्याय के बाद किसी एक महान व्यक्ति के गीता के ऊपर कहे उद्‌गारों को प्रकट किया। स्मिता बतरा ने भी अपने विचारों को भक्तों के समक्ष रखा। इस उत्सव में सभी भक्तों का योगदान अत्यंत सराहनीय है। गीता आश्रम मुम्बई के भक्तों ने मिलकर सन बिम आश्रम में 270 बच्चों को खाना खिलाया। ये अपाहिज बच्चे हैं, परन्तु जिन्दगी के प्रति उनका रवैया बहुत पोजिटिव है। कई भक्तों ने मुफ्त में गीता पुस्तक का वितरण किया। 20 दिसंबर को गीता जयन्ती के समापन दिवस का कार्यक्रम श्रीमती अम्बोजी के घर अत्यन्त धूमधाम से मनाया गया। एक बड़ा हवन कुण्ड स्थापित किया गया। करीबन 50 भक्तगणों ने संपूर्ण गीता के श्लोकों का पाठ करते हुए हवन कुण्ड में आहुतियां प्रदान की। इस समय जो समा बंधा था उसकी शब्दों में व्याख्या करना कठिन है। एक मंत्र का उच्चारण जब भक्तगण कर रहे थे तो ऐसा लग रहा था कि उनका स्वर दीवार तोड़कर मुम्बई के हर घर में प्रवेश कर रहा है। अंत में सभी भक्तगण प्रसाद लेकर अपने-अपने घरों की तरफ रवाना हुए। इस तरह मुम्बई जैसे आपाधापी वाले शहर में सभी भक्तों ने श्रीमती स्वर्ण अम्बो जी के संचालन में गीता जयंती के उत्सव का अकथनीय आनन्द उठाया।

गीता आश्रम उष्ट्रवाहिनी मन्दिर जोधपुर

परमपूज्य गुरुदेव के अनमोल आशीर्वाद से यहां का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। गीता जी का लघुयज्ञ जोर-शोर से चल रहा है।

दिनांक 20 दिसंबर के दिन मोक्षदा एकादशी को गीता-जयन्ती समारोह धूमधाम से मनाया गया। प्रातः 10.00 बजे से गीता जी के सम्पूर्ण मंत्रों द्वारा यज्ञ किया गया। यजमान श्री बालकृष्ण जी सपत्नीक व आचार्य पीठ पर भाई जेठमल थानवी थे।

दिनांक 1 जनवरी 08 को गीता जी के लघु यज्ञ के बारह वर्ष पूर्ण कर तेरहवें वर्ष में प्रवेश करने के उपलक्ष्य में गीता आश्रम उष्ट्रवाहिनी मन्दिर में प्रातः 10.00 बजे से गीता जी के सम्पूर्ण मंत्रों द्वारा यज्ञ किया गया। जिसमें कई भक्तों ने भाग लिया। यजमान श्री आनन्द गोपाल वोहरा सपत्नीक व पाठ भाई शक्ति स्वरूप व बहन पुष्पा जी जोशी ने किया।

दिनांक 7 जनवरी को अश्वेराज जी के तालाब स्थित होटल लेक व्यू के मालिक श्री नारायण सिंह भाटी द्वारा गीता जी का सम्पूर्ण यज्ञ किया गया जिसमें कई भक्तों ने भाग लिया।

गीता आश्रम, कानपुर- उरई

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज ने 15-12-2007 को गीता आश्रम दिल्ली कैंट से कानपुर-उरई गीता आश्रम हेतु प्रस्थान किया। वहां गीता आश्रम, 49, इंडस्ट्रियल स्टेट, कानुपर (उ.प्र.) में सायंकाल 4.00 बजे से 7.00 बजे तक भक्तों द्वारा संकीर्तन-भजन और स्वामी जी का गीता प्रवचन, आरती, प्रसाद-वितरण के साथ दिनांक 16 से 19 दिसम्बर तक होता रहा। श्री सद्‌गुरुदेव के अनन्य भक्त कानपुर के भक्तों के सहयोग से गीता जयंती के उपलक्ष्य में सहस्रों गीता पुस्तकें विभिन्न स्तरों के विद्यालयों में गीता के महत्व को बताते हुए वितरित करा चुके हैं। इस वर्ष भी श्री गोपालदास लालवानी जी के माध्यम से श्री मुनी नारायण द्विवेदी जी, श्री रमेशचन्द्र वर्मा जी के साथ श्री स्वामी जी प्रारम्भिक विद्यालय में गये। विद्यालय के विद्यार्थियों ने गीता से संबंधित कई कार्यक्रम प्रस्तुत किए। श्री द्विवेदी

जी, वर्मा जी लालवानी जी सभी ने रोचक व्यावहारिक कार्य से विद्यार्थियों के लिये गीता से लाभप्रद बाते बतलायीं और गीता के पठन की प्रेरणा दी। श्री स्वामीजी ने अपना आशीर्वाद देते हुए कहा- गीता जन-जन के मन-मन का गीत है। यह गीता घर-घर में पूजा घर में अवश्य होनी चाहिए। प्रधानाचार्य जी ने अपने नवनिर्मित भवन में सबका स्वागत करते हुए अपने क्षेत्र में गीता आश्रम की एक शाखा स्थापित करने का उत्साह प्रकट किया और ऐसा कार्यक्रम प्रतिवर्ष करने का निश्चय किया। दिनांक 20 दिसम्बर गीता जयंती के पावन दिवस पर श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी की अध्यक्षता में सम्पूर्ण गीतायज्ञ हुआ। प्रभुभक्त श्री जुगल बिहारी गुप्ता जी ने सपत्नीक अनेक आगन्तुक भक्त नर-नारियों के साथ सोत्साह भाग लिया। आकाश स्वाहा-स्वाहा की ध्वनि से गूंज गया। अन्त में आरती-प्रसाद वितरण के साथ भंडारा भी हुआ।

सायंकाल उरई से पधारे हुए श्री राजेन्द्र प्रसाद निरंजन जी स्वयं आकर श्री स्वामीजी को गीता आश्रम शाखा उरई ले गये। वहां दिनांक 21 से 27 तक दैनिक रूप से मध्याह्न 4 से 6 बजे तक गीता सत्संग किया और अन्त में दिनांक 27 दिसम्बर को सम्पूर्ण गीता यज्ञ एवं प्रसाद-वितरण हुआ। गीता आश्रम के निर्माता प्रभुभक्त श्री रामदयाल जी की पुण्यतिथि, कृष्ण जन्माष्टमी, गीता जयंती, श्री महाराज जी का जन्मोत्सव आदि यहां भक्तलोग श्रद्धापूर्वक मनाते रहते हैं। साथ ही यहां साप्ताहिक रूप से गीता जी का सत्संग चलता रहता है। आश्रम में श्री राधाकृष्ण विग्रह विराजमान हैं। उनकी प्रातः-संध्या पूजा आरती विधिवत् होती रहती है। नगर के प्रतिष्ठित अवकाशप्राप्त प्रोफेसर श्री अवस्थी जी का हर मंगलवार को गीता पर प्रवचन और संकीर्तन-भजन भी होता है।

दिनांक 27 दिसम्बर को उरई से चलकर कानपुर में भक्तजनों से मिलते हुए ट्रेन द्वारा श्री स्वामीजी महाराज गीता आश्रम दिल्ली कैंट पहुंच गये।

शोक संदेश



डॉ. धर्मबीर गुप्ता का जन्म 27 अक्टूबर 1932,
देहान्त 2 जनवरी 2008

गीता आश्रम मुख्यालय, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-10, आदरणीय डॉ. धर्मबीर गुप्ता जी के दि. 2 जनवरी 2008 को सुखदेव विहार, नई दिल्ली में हुए दुखद एवं आकस्मिक निधन पर अत्यंत शोकाकुल हैं।

डॉ. धर्मवीर गुप्ता गीता आश्रम के संस्थापक अध्यक्ष परम पूज्य स्वामी हरिहर जी महाराज के एक वरिष्ठ शिष्य थे। वे गीता आश्रम की गतिविधियों में सक्रिय भाग लेते थे। गीता आश्रम की कार्यकारिणी के सदस्य डॉ. धर्मवीर गुप्ताके शोकाकुल परिवार के सदस्यों के प्रति अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करते हैं।

डॉ. गुप्ता उच्च शिक्षा प्राप्त अत्यन्त विद्वान व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी पीएचडी की डिग्री लखनऊ विश्वविद्यालय से प्राप्त की थी। अपनी लम्बी और अनुपम सफलताओं में उन्होंने यूरोप, दक्षिण पूर्वी एशिया, अफ्रीका, श्री लंका, चीन और जापान आदि देशों में प्रवास किया। उन्होंने डेनमार्क में कार्पोरेटिड शिक्षा में विशेष ट्रेनिंग भी प्राप्त की थी।

राशिफल (फरवरी-2008)

मेष (चू, चे, चो, ल, ली, लू, ले, लो, अ) किसी शुभ कार्य पर व्यय होगा। वृथा दौड़-धूप अधिक रहेगी व पारिवारिक सहयोग में कमी रहेगी। गुरु की दृष्टि पड़ने से धर्म-कर्म की ओर रुचि रहेगी।

वृष (ई, ऊ, ए, ओ, बा, बी, बु, बे, बो) आपका शुक्र अष्टम में है, जिससे बनते कार्यों में विघ्न उत्पन्न होंगे। आय कम तथा खर्च अधिक रहेंगे। घरेलू एवं व्यवसाय-सम्बन्धी उलझनों के कारण मन परेशान रहेगा।

मिथुन (क, की, कु, घ, ड़, छ, के, को, ह) धन-लाभ व अकस्मात् यात्रा भी होगी। बिगड़े काम में सुधार होगा।

कर्क (ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो) धार्मिक एवं शुभ कार्यों पर खर्च अधिक रहेगा। नए व श्रेष्ठ लोगों के साथ सम्पर्क बनेंगे।

सिंह (मा, मी, मू, मे, मो, ट, टी, टू, टे) स्वास्थ्य में विकास, किसी बन्धु से मनमुटाव। मासांत में कुछ बिगड़े कामों में सुधार होगा, धन-लाभ व उन्नति के अवसर प्राप्त होंगे।

कन्या (टो, प, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो) अत्यधिक कठिनाई एवं संघर्ष के पश्चात् निर्वाह-योग्य आय के साधन बनेंगे। आर्थिक व घरेलू उलझनों के कारण परेशानियां बढ़ेंगी।

तुला (रा, री, रु, रे, रो, ह, त, ती, तू, ते) किए गए प्रयासों में सफ़लता मिलेगी, आकस्मिक धन लाभ हो। परन्तु खर्चों में भी अधिकता रहेगी।

वृश्चिक (तो, ना, नी, नू, ने, या, यी, यू) बनते कार्यों में विघ्न उत्पन्न होंगे। अकस्मात् खर्चों में वृद्धि होने के संकेत हैं। विदेश सम्बन्धी कार्यों की योजना बनेगी।

धनु (ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढ, भे) आय कम तथा खर्च अधिक रहेगा। आंखों का कष्ट एवं पेट विकार होने का भय, गृह में कई मंगल कार्य होने के संकेत हैं।

मकर (भो, ज, जी, जे, खी, खू, ग, गी) कुछ बिगड़े कार्य बनेंगे। अकस्मात् धन-लाभ के अवसर प्राप्त होंगे। मान-सम्मान में वृद्धि होगी।

कुम्भ (गु, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा) निर्वाह-योग्य आय के साधन बनते रहेंगे। आराम कम व दौड़-धूप अधिक रहेगी। भूमि व वाहन आदि पर खर्च होगा।

मीन (दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची) नई-नई योजनाएं बनाने में समय व्यतीत होगा। आध्यात्मिक कार्यों की ओर प्रवृत्ति होगी। व्यवसाय में लाभ के अवसर प्राप्त होंगे।

ज्योतिर्विद-

सत्यपाल शर्मा

एम.एस.सी. (फिजिक्स) ज्योतिर्विज्ञान केन्द्र,
गीता आश्रम सदर बाजार,
दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010
दूरभाष : (011) 25684529
e-mail : daivagya@hotmail.com

व्रत त्यौहार सूची

मास फरवरी - 2008 दक्षिणायन, हेमन्त ऋतु, गोलार्ध दक्षिण + उत्तर

क्र.स.	व्रत पर्व	दिनांक	वार
1.	षट्तिला एकादशी व्रत	2-2-2008	शनिवार
2.	माघ कृष्ण प्रदोष व्रत	4-2-2008	सोमवार
3.	मौनी अमावस पितृकार्येषु	6-2-2008	बुधवार
4.	मौनी अमावस स्नान	7-2-2008	गुरुवार
5.	गौरी तृतीया व्रत	9-2-2008	शनिवार
6.	श्री गणेश तिल चतुर्थी	10-2-2008	रविवार
7.	वसन्त पंचमी, श्रीपंचमी	11-2-2008	सोमवार
8.	रथ- आरोग्य सप्तमी	13-2-2008	बुधवार
9.	जया एकादशी व्रत	17-2-2008	रविवार
10.	भीष्म द्वादशी	17-2-2008	रविवार
11.	माघ कृष्ण प्रदोष व्रत	18-2-2008	सोमवार
12.	माघ पूर्णिमा व्रत	20-2-2008	बुधवार
13.	माघ पूर्णिमा स्नान	21-2-2008	गुरुवार
14.	ग्रस्तास्त चन्द्रग्रहण	21-2-2008	गुरुवार
15.	श्री गुरु रविदास जयंती	21-2-2008	गुरुवार
16.	फाल्गुन गणेश चतुर्थी	24-2-2008	रविवार

पंचक प्रारम्भ 7-2-2008 गुरुवार

पंचक समाप्त 12-2-2008 मंगलवार

ग्रस्तास्त खग्रास चन्द्रग्रहण 21-2-2008 गुरुवार

प्रातः 7/17 से 10/39 तक केवल पश्चिम भारत

निदेशक :

पं. गौरीदत्त शर्मा ज्योतिर्विद (गीता रत्न)

ज्योतिष विज्ञान केन्द्र, गीता आश्रम, सदर बाजार,

दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010

फोन नं. 011-25684529, 25683558, मोबाइल 09418551441

e-mail : daivagya@gmail.com

मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड

गीता आश्रम, थाईलैंड, बैंकाक

य इइं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥

मेरे में पराभक्ति करके जो इस परम गोपनीय संवाद- (गीता-ग्रंथ) को मेरे भक्तों में कहेगा, वह मुझे ही प्राप्त होगा- इसमें कोई संदेह नहीं है।

(गीता-१८/६८



श्रीमती मेकिन उरानन

मेकिन उरानन स्कालरशिप फण्ड (थाईलैण्ड)

'मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड' की स्थापना परम पूज्य परमहंस स्वामी श्री हरिहर जी महाराज द्वारा 1989 में बैंगकाक में निर्धन किन्तु प्रतिभाशाली छात्रों को नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा में सहायता प्रदान करने हेतु की गई थी। श्रीमती मेकिन उरानन्ट, उनका परिवार श्री जयकुमार मीरपुरी, श्री मित श्यामवाला, श्री हासाराम एस. तनवानी, कृष्णा एशियन आर्ट्स कं. और श्री दुर्गो एफ. हिंगोरानी तथा अन्य अनेक लोग इस फंड की पूंजी को बढ़ाने के लिए तत्पर हैं। वर्ष 2005 में इस फंड से थाई भाथ 605,000 (अमेरिकन डॉलर 15,350) हो गया है। छात्रवृत्ति 171 विद्यार्थियों को प्रदान की जायेगी।

फंड की व्यवस्था की देखभाल गीता आश्रम थाईलैण्ड की 'मेकिन उरानन छात्रवृत्ति कमेटी' करती है। उस कमेटी के सदस्य हैं- Prof. Krisda Arunvongse, Dr. Chirapat Prapanvidya (Silpakorn University), Dr. Samniang Leurmsai (Silpakorn University), Dr. Prapod Assavarirulhakarn (Chulalongkorn Univeristy), Miss Vilai Ueranant, Dr. M.C. Agarwal (former Senior Officer of the United Nations), Mr. Somsakdi Tantiwathin (former President of Rotary Club of Bangkapi and former President of India-Thai Chamber of Commerce) and Mr. Doulat C. Hotwani (Treasurer, Geeta Ashram, Thailand).

निर्धन और प्रतिभाशाली छात्रों की शिक्षा-प्राप्ति में सहायता करना एक सवोत्तम पुण्य कार्य है। शायद इस सहायता के बिना उनके लिए शिक्षा प्राप्ति अत्यन्त कठिन होती। योग्य छात्र अधिकाधिक संख्या में आर्थिक सहायता प्राप्त कर सकें इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए 'मेकिन उरानन्ट स्कालरशिप फंड' दानी महानुभावों से अधिकाधिक दान देने का अनुरोध करता है।

अमर उपदेश

श्रीमद्भगवद्गीता भगवान के मुखारविन्द से निकला हुआ अमर उपदेश है। जो भी जीव इस अमर उपदेश को, चाहे वह जिस देश में हो, जिस भेष में हो, श्रद्धा सहित धारण करता है वह जीवत्व को छोड़कर अमृत की प्राप्ति करता है- इसमें कोई संशय नहीं है।

श्रीमद्भगवद्गीता के द्वादश अध्याय को भगवान का हृदय कहा गया है इस द्वादश अध्याय का अखण्ड पाठ आज गीता आश्रम मथुरा व दिल्ली कैण्ट में लगातार ५० साल से चल रहा है और विश्व में गीता परिवार एवं गीता प्रेमी इसका श्रद्धा सहित पाठ करते हैं।

इस द्वादश अध्याय के पढ़ने से मनोबुद्धि, आत्मबल और ईश्वर के प्रति श्रद्धा बढ़ती है।

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः॥

(गीता [illegible])

[illegible] और [illegible] देवी महावर

[illegible]

Printer: GEETA ASHRAM PRINTING PRESS, Sadar Bazar, Delhi-110010

GP Regd. No. 6806/60
DL No SW-10/4032/2006-08
Licenced to post without prepayment.
U (SW) - 4/2006-08
Posted on 2nd / 3rd of each month
Issue : February 2008
Price 1 Copy Rs. 10/-



Krishnam Vande Jagad Gurum

Urdhvamulam adhasakham asvatham prahur avyayam
Chhandamsi yasya parnani yas tam veda sa vedavit

The imperishable tree of creation is said to be with its roots above and branches below; its leaves are the metres of the Vedas, and, he who knows it is the knower of the Vedas.



Shri 108 Swami Harihar Ji Maharaj

August 06, 2000

A humble Shradhaanjali on the occasion of our Silver Anniversary, at the Lotus Feet of our Spiritual Master His Holiness Shri 108 Swami Hari Har Ji Maharaj, Founder President of over 600 Geeta Ashrams Worldwide. A Tapasvi and a Karm Yogi of the Highest Order. He completed his journey on earth at the age of 1[illegible], and now resides in our hearts and continues to guide us,